वैश्विक संवाद

10.3

पत्रिका

International Sociological Association

अनेक भाषाओं में एक वर्ष में 3 अंक

टॉकिंग सोशियोलोजी कार्ल पोलान्यी के साथ — जोहाना ग्रबनर

जलवायु एवं परिवर्तन — मोहम्मद रिज़वान सिद्दीकी, मार्कस विसेन, विश्वास सतगर, जोआन फिट्जगेराल्ड

कोविड–19: महामारी और संकट — महमुदुल हसन लास्कर, अतिला मेलेघ, इलियाना ओलीव और मैनुअल ग्रेसिया, ब्रिजिट ऑलेनबेकर, पेट्रा एज्जेडाइन, डोरा गेब्रियल, माइकेल लीबफिंगर, किंगा मिलानकोविक्स और वेरोनिका प्रिलर, देव नाथ पाठक, माइकेल ग्रिगोला और क्रेग लुंडी

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य — सैयद फरीद अलातास

स्मृति में : योगेंद्र सिंह — मीर सुहिल रसूल

समाज की पुनर्कल्पना — एस.ए. हामीद होसैनी, बैरी गिल्स, स्कॉट टिमके, शेलिन गोम्स

श्रीलंका से समाजशास्त्र — सिरि हेटीगे, शुभांगी एम.के. हेरथ, कलिंगा टयूडोर सिल्वा, फरज़ाना हनीफा, प्रेमकुमार डी सिल्वा

खुला अनुभाग

> चीन में प्लास्टिक अपशिष्ट का मामला

GD अंक 10 / क्रमांक 3 / दिसम्बर 2020
https://globaldialogue.isa-sociology.org/

> सम्पादकीय

टॉकिंग सोशलॉजी के अनुभाग में सबसे विख्यात पत्रकार रॉबर्ट कुत्तनेर के साथ एक साक्षात्कार है जो आज के लिए कार्ल पोलान्यी के कृत्यों को पढ़ते हैं। बीसवीं सदी के प्रारंभ की राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति से शुरू होकर यह साक्षात्कार वैश्वीकरण के वर्तमान रुझानों, लोकतांत्रिक निर्णय लेने को मजबूत करने के लिए मजबूत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं की आवश्यकता और बढ़ते अंतरराष्ट्रीय प्रवास के समय में समावेशन और अपवर्जन के मुद्दों पर चर्चा करता है।

हमारी पहली संगोष्ठी हमारे समय के एक सबसे महत्वपूर्ण मुद्दे: जलवायु परिवर्तन को उठाती है। एक तरफ, आलेख जलवायु परिवर्तन के सामाजिक प्रभावों की चर्चा करते हैं जो कि लोकतंत्र और प्रवास के प्रश्नों जैसे पारिस्थितिक मुद्दों से आसानी से जुड़े नहीं है। दूसरी तरफ इस अनुभाग के लेख पूंजीवाद के माध्यम से पर्यावरण विनाश को आगे बढ़ाने के संभावित विकल्पों का का खाका खींचते हैं।

हमारे लिखते समय कोविड–19 महामारी और उसके प्रभाव अभी भी दुनिया में बहुत अधिक हावी हैं, यद्यपि विभिन्न तरीकों से। इस कारण से ही हम ने एक बार फिर कोविड–19 पर दुनिया भर से विश्लेषण एकत्र करने के लिए एक अनुभाग को सम्मिलित किया है। लिव–इन केयर, दान, प्रवास से लेकर लॉकडाउन के दौरान जन समाजशास्त्र की संभावनाओं जैसे मुद्दों पर भारत और यूरोप से आलेखों के साथ यह विशिष्ट अनुभाग हमारे क्षेत्र की वर्तमान चर्चाओं की झलक प्रदान करता है।

कोविड–19 संकट व्यापक समाज में समाजशास्त्रीय चिंतन एवं सिद्धांत की भूमिका और प्रभाव पर तहत सैयद फरीद अलातास के व्यापक चिंतन का प्रारंभिक बिंदु भी है।

इस अंक में भारतीय समाजशास्त्र के अग्रणी, योगेंद्र सिंह को श्रद्धांजलि दी गई है जिनका इस वर्ष निधन हो गया। औपनिवेशिक भारत में आधुनिकीकरण एवं परंपरा पर उनका शोध अभूतपूर्व है।

तीन आलेख समाज की पुनर्कल्पना करने और वर्तमान घटनाक्रमों के साथ–साथ समाजशास्त्र के महत्व पर चिंतन करते हैं। एस.ए. हामिद होसैनी एवं बैरी गिल्स एक परिवर्तनकारी दृष्टिकोण अपनाते हैं जबकि शेलिन गोम्स एवं स्कॉट तिम्के चर्चा करते हैं कि समाज को एक समाजशास्त्रीय परिपेक्ष्य से कैसे देखा जाए।

इस अनुभाग में हमारा क्षेत्रीय फोकस श्रीलंका से समाजशास्त्रीय शोध पर प्रकाश डालता है। सिरी हेत्तिगे द्वारा संयोजित यह अनुभाग इस देश के जीवंत विषय पर प्रकाश डालता है जिसमें श्रीलंका में हिंसक संघर्षों की जांच से लेकर एकता के प्रश्न और देश में समाजशास्त्र एवं मानवशास्त्र के इतिहास में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। खुला अनुभाग चीन में प्लास्टिक अपशिष्ट संकट पर चर्चा करके वैश्वीकरण और पारिस्थितिक आपदा एवं मुद्दों पर लौटता है। ■

ब्रिजित ऑलनबैकर और **क्लॉस डोरे**
वैश्विक संवाद के संपादक

> वैश्विक संवाद आई.एस.ए. वेबसाइट पर अनेक भाषाओं में देखा जा सकता है।
> प्रस्तुतियाँ <globaldialogue.isa@gmail.com> पर भेजी जा सकती हैं।

International Sociological Association
GLOBAL DIALOGUE

> संपादक मण्डल

संपादक : ब्रिजिट ऑलनबॉकर, क्लॉस डोरे

सह–सम्पादक : जोहाना ग्रबनर, क्रिस्टीन शिकर्ट

सहयोगी सम्पादक : अर्पणा सुन्दर

प्रबंधन संपादक : लोला बुसुतिल, अगस्त बागा

सलाहकार : माइकल बुरावे

मीडिया सलाहकार : जुआन लेजाररगा

परामर्श संपादक :
साडी हनाफी, ज्योफी प्लीयर्स, फिलोमिन गुतिरेज, एलोइजा मार्टिन, सावाको शिराहेस, इजाबेला बरलिंस्का, तोबा बेन्सकी, चिह–जुए जेचेन, जेन फ्रित्ज, कोइची हासेगावा, हिरोशी इशिदा, ग्रेस खुनो, एलिसन लोकोन्तो, सुसन मेकडेनियल, एलिना ओइनास, लोरा ओसो कैसास, बंडाना पुर्कायस्था, रोहडा रेडॉक, मौनीर सैदानी, आयसे सकतांबर, सेली स्कालोन, नाजानीन शाहरोकनी।

क्षेत्रीय संपादक

अरब दुनिया : *(ट्यूनिषिया)* मौनीर सैदानी, फातिमा रधौनी, हबीब हज सलेम; *(अलजीरिया)* सोराया मौलोदजी गराउदजी; *(मोरक्को)* अब्देलहादी एल हालहोली, सालिदा जाइन; *(लेबनान)* साड़ी हनाफी।

अर्जेन्टीना : मैगडालेना लेमस, पिलर पी पुइग, मार्टिन उर्दुसन।

ब्राजील : गुस्तावो तानिगुती, एंजेलो मार्टिन्स जूनियर, एंड्रेजा गली, दिमित्रि सर्बोन्सीनी फर्नाडीस, गुस्तावो दिअस, जोसे गुइराडो नेटो, जेसिका मज़िजनी मेंडिस।

फ्राँस/स्पेन : लोला बुसुतिल

भारत : रश्मि जैन, निधी बंसल, प्रज्ञा शर्मा, मनीष यादव।

इंडोनेशिया : कमांतो सुनार्तो, हरि नुग्रोहो, लूसिया रतीह कुसुमादेवी, फिना इद्रियती, इंदेरा रत्ना इरावती पट्टिनसारानी, बेनेडिक्टस हरि जूलियावान, मोहम्मद शोहीबुद्दीन, डोमिंगगस एलसीड ली, एंटोनियस एरियो सेतो हार्डजाना, डायना तेरेसा पाकासी, नुरूल ऐनी, गेगेर रियांतो, आदित्य प्रदान सेतियादी।

ईरान : रेयहाने जावदी, नियाष डॉलाती, अब्बास षाहरबी, सैयद मोहम्मद मुतालेबी, फैजेह खजहजादे।

कजाकस्तान : अइगुल जाबिरोवा, बायन स्मागमबेट, आदिल रोदियोनोव, अल्माश त्लेसपयेवा, कुआनिश टेल, अलमागुल मुस्सीना, अकनूर ईमानकुल।

पौलैंड : जुस्तिना कोसिंस्का, मगदालेना कमेला, अलेक्सांद्रा लुबिंस्का, एडम मुल्लेर, जोनाथन स्कोविल, अलेक्सांद्रा बीएरनाका, जेकब बारस्जेवस्की, अगनिज़्का सजीपुल्सका, इगा लाजिंस्का, अलेक्सांद्रा सन्न, सारा हरकजिंस्का, जोफिया पेन्जा–गेबलर, इवोना बोजडजीजेवा, वेरोनिका पीक।

रोमानिया : रलुका पॉपेस्कू, राइसा–गेब्रियला जमीफिरेस्कू, लुसियाना एनास्तोसोई, डायना एलेक्सेंड्रा डुमित्रोस्कु, इउलिआन गबोर, बियांका मिहायला, अलेक्सांद्रा मोसोर, मारिया स्तोइसेस्कू।

रूस : ऐलेना ज्द्रावोम्यस्लोवा, अनास्तासिया दौर, वेलेंटीना इसाऐवा।

ताईवान : वान–जु–ली, ताओ–युंग–लु, पो–शुंग होन्ग, यु–मिन हुआंग, बुन–की लिन, यू–चिआ चेन।

तुर्की : गुल कोरबासियोग्लू, इरमक एवरेन।

इस खंड के आलेख हमारे समय के सबसे चिन्ताशील मुद्दे, जलवायु परिवर्तन, को उठाते हैं। वे उसके सामाजिक प्रभावों जैसे लोकतंत्र और प्रवास के प्रश्न जो सरलता से पारिस्थितिक मुद्दों से जोड़े नहीं जाते है, पर विमर्श प्रस्तुत करते हैं और साथ ही पूंजीवाद के माध्यम से पर्यावरणीय क्षति/विनाश को आगे ले जाने के संभावित विकल्पों का खाका खींचते हैं।

वैश्विक संवाद कोविड–19 के कारण विभिन्न देशों के लोगों द्वारा सामना की जा रही परिस्थितयों और संकट पर अपनी श्रंखला को जारी रखता है। लिव–इन देखभाल, दान, एवं प्रवास से लेकर लॉकडाउन के दौरान जन समाजशास्त्र जैसे मुद्दों पर भारत और यूरोप से आलेखों के साथ यह खंड हमारे क्षेत्र के वर्तमान विमर्श पर एक दृष्टि प्रदान करता है।

श्रीलंका से समाजशास्त्र पर ध्यान केंद्रित कर यह खंड इस देश में जीवंत विषय को आलोकित करता है। इसमें श्रीलंका में हिंसात्मक संघर्ष के मुद्दों से लेकर एकता के प्रश्न सम्मिलित हैं। यह खंड देश में समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के इतिहास के बारे में भी अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

GD

सेज प्रकाशन की उदार ग्रांट से
वैश्विक संवाद का प्रकाशन संभव है।

> इस अंक में

सम्पादकीय 2

> टॉकिंग सोशियोलोजी

कार्ल पोलान्यी के साथ : वैश्विक पूंजीवाद से बचना
रॉबर्ट कुत्तनेर के साथ एक साक्षात्कार
जोहाना ग्रबनर, आस्ट्रिया द्वारा 5

> जलवायु एवं परिवर्तन

दक्षिण एशिया में जलवायु प्रवास
मोहम्मद रिज़वान सिद्दीकी, बांग्लादेश द्वारा 8

जलवायु संकट एवं लोकतंत्र का प्रश्न
मार्कस विसेन, जर्मनी द्वारा 10

पूंजीवाद के बाद : लोकतांत्रिक पर्यावरणीय–समाजवाद?
विश्वास सतगर, दक्षिण अफ्रीका द्वारा 12

नगरीय जलवायु कार्यवाही कैसे समुदायों का पुनर्निर्माण कर सकती हैं?
जोआन फिट्जगेराल्ड, यू एस ए द्वारा 14

> कोविड–19: महामारी और संकट

सामाजिक प्रस्थिति और कलंक के रूप में परोपकार
महमुदुल हसन लास्कर, भारत द्वारा 16

देखभाल की कमी? देखभाल प्रवास और राजनीतिक जनसांख्यिकी
अतिला मेलेघ, हंगरी द्वारा 18

क्या कोविड–19 : वैश्वीकरण के अंत तक ले जा सकता है?
इलियाना ओलीव और मैनुअल ग्रेसिया, स्पेन द्वारा 20

कोविड–19 का सामना करना : मध्य यूरोप में लिव–इन देखभाल
ब्रिजिट ऑलेनबेकर, ऑस्ट्रिया; पेट्रा एज्जेडाइन, चेक गणराज्य; डोरा गेब्रियल, हंगरी; माइकेल लीबफिंगर, ऑस्ट्रिया; किंगा मिलानकोविक्स, हंगरी; वेरोनिका प्रिलर, ऑस्ट्रिया द्वारा 23

लॉकडाउन के दौरान दक्षिण एशिया में सार्वजनिक समाजशास्त्र
देव नाथ पाठक, भारत द्वारा 25

सार्वजनिक समाजशास्त्र : महामारी का सामना करना
माइकेल ग्रिगोलो और क्रेग लुंडी, यूके द्वारा 27

> सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

सामाजिक दूरी : समाजशास्त्र के लिए प्रासंगिकता
सैयद फरीद अलातास, सिंगापुर द्वारा 29

> स्मृति में

योगेंद्र सिंह : आधुनिक भारतीय समाजशास्त्र के एक प्रणेता
मीर सुहिल रसूल, भारत द्वारा 32

> समाज की पुनर्कल्पना

आमूल परिवर्तन के साथ : (पुनः) एकीकरण की तात्कालिकता पर
एस.ए. हामिद होसैनी, ऑस्ट्रेलिया द्वारा 34

"कोयानिसक्त्सी" से परे : सभ्यता की पुनर्कल्पना करना
बैरी गिल्स, फिनलैंड द्वारा 36

रस्ताफ़री : और वेस्ट इंडियन पुनर्निर्माण
स्कॉट टिमके एवं शेलिन गोम्स, त्रिनिदाद और टोबैगो द्वारा 38

> श्रीलंका से समाजशास्त्र

श्रीलंकाई समाजशास्त्र : वैश्विक और स्थानीय संदर्भों
सिरि हेटीगे, श्रीलंका द्वारा 40

श्रीलंकाई समाजशास्त्र : समय के पार एक झलक
शुभांगी एम.के. हेरथ, श्रीलंका द्वारा 42

शांति, संघर्ष और हिंसा पर चिंतन करना
कलिंगा टयूडोर सिल्वा, श्रीलंका द्वारा 44

हिंसा का विश्लेषण करना : श्रीलंकाई राज्य गठन
फरज़ाना हनीफा, श्रीलंका द्वारा 46

धुंधली सीमाएं : श्रीलंका में नृविज्ञान मानवशास्त्र एवं समाजशास्त्र
प्रेमकुमार डी सिल्वा, श्रीलंका द्वारा 48

> खुला अनुभाग

वैश्वीकरण एवं निर्भरता : चीन में प्लास्टिक अपशिष्ट का मामला
पीनार टेमोसिन, जापान द्वारा 50

"2020 को मानव इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण सदी का सबसे निर्णायक दशक माना जा सकता है, जहां 'असंभव की मांग करना' उभरती हुई क्रांतिकारी ताकतों के लिए एकमात्र 'यथार्थवादी' विकल्प बन जाता है"

एस.ए. हामिद होसैनी

> कार्ल पोलान्यी के साथ

वैश्विक पूंजीवाद से बचना

रॉबर्ट कुत्तनेर के साथ एक साक्षात्कार

रोबर्ट कुत्तनेर, श्रेयः रोबर्ट कुत्तनेर

रॉबर्ट कुत्तनेर द अमेरिकन प्रोस्पेक्ट पत्रिका के सह–संस्थापक एवं सह–संपादक एवं ब्रैंडिस विश्वविद्यालय के हेलर स्कूल में प्रोफेसर हैं। वे बिजनेस वीक एवं वाशिंगटन पोस्ट सिंडिकेट के लिए लम्बे समय तक स्तम्भकार थे। वे इकोनामिक पॉलिसी इंस्टीट्यूट के संस्थापक थे और वर्तमान में वे उसके प्रबंध मंडल एवं कार्यकारिणी समिति में अपनी सेवाएं दे रहे हैं। रॉबर्ट कुत्तनेर बारह पुस्तकों के लेखक हैं और उन्होंने हाल ही में *कैन डेमोक्रेसी सर्वाइव ग्लोबल कैपिटलिज्म?* एवं लोकतंत्र और 2020 के चुनाव पर अपनी नई पुस्तक *द स्टेक्स* लिखी है। उनकी अन्य पुस्तकों में 2008 की न्यूयॉर्क टाइम्स की बेस्टसेलर *ओबामा'ज चैलेंजः अमेरिका'स इकनोमिक क्राइसिस एंड द पावर ऑफ ट्रांस्फॉर्मेटिव प्रेजीडेंसी* और वित्तीय संकट पर 2013 में प्रकाशित *डेब्टरस प्रिजनः द पॉलिटिक्स ऑफ आस्टरियटी वर्सस पॉसिबिलिटी* सम्मिलित हैं। उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध पूर्व पुस्तक *एवरीथिंग फॉर सेलः द वर्चूज़ एंड लिमिट्स ऑफ़ मार्केट्स* (1997) है। अर्थशास्त्र एवं राजनिति के परस्पर सम्बन्ध को कवर करने वाला उनका मैगज़ीन लेखन *द न्यू यॉर्क टाइम्स मैगज़ीन एंड बुक रिव्यू, द अटलांटिक, हार्पर्स, द न्यू रिपब्लिक, न्यूयॉर्क रिव्यू ऑफ़ बुक्स, द न्यू यॉर्कर, न्यूयॉर्क मैगज़ीन, मदर जोन्स, विलेज वॉइस, कॉमनवेल्थ, डिसेंट, फॉरेन अफेयर्स, न्यू स्टेट्समैन, पॉलिटिकल साइंस क्वार्टरली, कोलंबिया जर्नलिज्म रिव्यू, हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू और चैलेंज* में छपा है। उनके पूर्व पदों में द वाशिंगटन पोस्ट में नेशनल स्टाफ लेखक एवं स्तम्भकार, अमेरिकन सीनेट बैंकिंग के मुख्य अन्वेषक, राष्ट्रपति कार्टर के नैबुरहूड पर राष्ट्रीय कमीशन के कार्यकारी निदेशक और द नई रिपब्लिक में आर्थिक संपादक सम्मिलित है। उन्हें कई पुरुस्कारों से सम्मानित किया गया है जिसमें आर्थिक दक्षता एवं सामाजिक न्याय पर जीवनपर्यन्त काम करने के लिए यूनाइटेड नेशंस डेवलपमेंट प्रोग्राम के पॉल हॉफमन अवार्ड सम्मिलित है। यहाँ जोहानस केप्लेर विश्वविद्यालय, लिंज़ में पीएचडी शोधार्थी और वैश्विक संवाद की सहायक संपादक **जोहना ग्रबनर** द्वारा उनका साक्षात्कार लिया गया।

(जे जी): 2018 में प्रकाशित आपकी पुस्तक कैन डेमोक्रेसी सरवाइव ग्लोबल कैपिटलिज्म में आप प्रारंभिक बीसवीं सदी के कार्ल पोलान्यी के विश्लेषण से प्रेरणा लेते हैं और तर्क देते हैं कि वर्तमान में हम आर्थिक एवं राजनीतिक दोनों रूप से एक समान परिस्थिति का सामना कर रहे हैं। क्या आप हमारे पाठकों के लिए इस तर्क को विस्तार से बता सकते हैं और पूंजीवाद के आपके विश्लेषण के लिए कार्ल पोलान्यी का उपागम कितना उपयोगी है, की व्याख्या कर सकते हैं?

(**आर के**): प्रारंभिक 20 बीसवीं में वित्तीय कुलीन एवं उनके राजनीतिक हितैशियों ने अपरिपक्व पूंजीवाद को सामाजिक लचीलेपन के अन्य तंत्रों को कुचलने की अनुमति प्रदान की है। यह वर्सेल्स की संधि द्वारा तीव्र हुआ जिसने ऋण संग्रहक मानसिकता एवं आर्थिक मितव्यतता के साथ अबंध नीति को जोड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि आम लोगों के लिए जीवन असहनीय हो गया, विशेष रूप से जर्मनी एवं ऑस्ट्रेलिया में, और बड़ी संख्या में लोग फासीवाद की तरफ मुड़ गए। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि संसदीय संस्थाओं में उनका विश्वास खत्म हो गया था और चूँकि चरम आर्थिक और राजनैतिक राष्ट्रवाद एक बेहतर मार्ग का वादा करता प्रतीत हो रहा था।

पोलान्यी के कहे अनुसार उन्नीसवीं सदी की आर्थिक प्रणाली के तीन तंत्र थे–स्वर्ण मानक, अबंध नीति वाणिज्य एवं यह विचार कि श्रम को एक वस्तु के रूप में बाजार में अपनी कीमत प्राप्त करनी है। बजट संतुलन एवं स्वर्ण मानक की भूमिका में राजकोषीय मितव्यतता, विश्व व्यापर संगठन और अनियमित वैश्विक वाणिज्य को प्रोत्साहित करने वाली नवउदारवाद की विचारधारा और मुक्त व्यापर के नाम पर श्रम सरंक्षण को ख़त्म करने के साथ वर्तमान क्षण के साथ इसकी समानताएं सटीक हैं। एक बार फिर अबंध नीति ने आम लोगों के लिए आर्थिक तबाही को पैदा किया है और इसकी राजनैतिक प्रतिक्रिया ने अति–राष्ट्रवाद में परिवर्तित हो गयी है।

इससे भी भयावह बात थी कि युद्ध–पश्चात युग में हमने यह जाना कि अर्थशास्त्र के मामले में शुद्ध पूंजीवाद को सामाजिक संरक्षण से बफर करना संभव है। ये व्यवस्था को और अधिक उत्पादक और अधिक न्यायोचित भी बनाते हैं। लेकिन 1973 के पश्चात के समय ने दर्शाया कि राजनीति के मामले में इस संतुलन को बनाये रखना काफी कठिन है। पूंजीपतियों को बाध्यताएं पसंद नहीं हैं और वे उनका विरोध करते हैं।

इसका परिणाम 1920 और 1930 के दशक के समान ही रहा है। जब कामकाजी लोगों को विस्थापन का सामना करना पड़ता है, और राजनीतिक केंद्र उनका बचाव नहीं करतें हैं, तो वे उदार वामपंथ की तरफ मुड़ जातें हैं। 1990 के दशक में कई उदार वामपंथ की तरफ मुड़े, लेकिन 1990 के दशक तक उदार वामपंथियों ने भी अधिकांश नवउदार फॉर्मूले को अंगीकार कर लिया था।

अब हमारे सामने दुनिया के सबसे शक्तिशाली देश, संयुक्त राज्य का नेतृत्व एक फासीवादी कर रहा है; पुराने और नए यूरोप दोनों में नव–फासीवाद है और और विश्वसनीय लोकतान्त्रिक समाजवादियों के मार्ग में बहुत कम है। यह सब विशुद्ध पोलानयी विश्लेषण है।

(जे जी): इन विशिष्ट समानताओं के साथ, आज का पूंजीवादी विश्लेषण, उदहारण के लिए, "जस्ट–इन–टाइम प्रोडक्शन" को अक्सर काम में लेने वाली वैश्विक वैल्यू चैन के आस पास संगठित होता है। इन विशिष्ट समानताओं के साथ, आज का पूंजीवादी विश्लेषण, उदहारण के लिए,"जस्ट–इन–टाइम प्रोडक्शन" को अक्सर काम में लेने वाली वैश्विक वैल्यू चैन के आस पास संगठित होता है। क्या यह 1930 के दशक की वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ परिणामकारी अंतर का प्रतिनिधि नहीं करता है? और पोलान्यी का विश्लेषण अभी भी फलदायी क्यों है?

(**आर के**): और कुछ नहीं तो, वैश्विक आपूर्ति श्रंखला की तरफ परिवर्तन पोलान्यी को प्रासंगिक बनाता है। एशिया में, जहाँ कम वेतन वाले और शोषित कामगार उपलब्ध हैं, विशाल निगमों के आउटसोर्स होने के कारण श्रमिकों को बाजार की अनिश्चितताओं से बचाने के लिए लोकतंत्रों में सामाजिक अनुबंधों को बनाये रखना बहुत कठिन हो जाता है। वैश्विक आपूर्ति श्रंखला स्टेरॉइड्स पर आधारित मुक्त बाजार हैं।

(जे जी): अमेरिका के साथ साथ लेटिन अमेरिका और यूरोप में भी दक्षिणपंथी लोकलुभावनवाद उभार पर है। यूरोप, अमेरिका और लेटिन अमेरिका जैसी जगहों पर दक्षिणपंथी लोकलुभावनवाद के उभार के साथ–साथ नव–फासीवाद जिसे आपने पूर्व में में वर्णित किया था, के उभार को आप पूंजीवाद के वैश्वीकरण और राज्य नियंत्रण के कमतर होने के साथ कैसे जोड़ते हैं?

(**आर के**): असल में, समस्या पूंजीवाद का वैश्वीकरण नहीं है। 1944 की ब्रेटन वुड्स प्रणाली के तहत, हमारे पास वैश्वीकृत पूंजीवाद का एक रूप था जिसे स्पष्ट रूप से, राष्ट्रों को वैश्विक निजी पूंजी के अपस्फीति दबाबों से बचाने हेतु पूर्ण रोज़गार अर्थव्यवस्थाओं को विकसित करने के लिए काफी राजनैतिक एवं नीतिगत स्थान उपलब्ध कराने के लिए डिज़ाइन किया गया था।

यूरोप के अंदर, डब्लूटीओ और मॉस्ट्रिच्ट संधि के आगमन के बाद से लागू वैश्वीकरण के संस्करण को वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी (यूरोप के मामले में लोगों के) के मुक्त संचरण के सिद्धांत को काम में लेने के लिए डिज़ाइन किया गया है ताकि लोकतान्त्रिक राजनीति की पूंजी को विनियमित, बाधित और बफर करने की क्षमता को कमतर किया जा सके। एक बार फिर, विस्थापित लोगों की प्रतिक्रिया अति–राष्ट्रवादियों एवं दक्षिणपंथी लोकलुभानवाद की तरफ (और अक्सर, जैसा कि बोलीविया में, वामपंथी लोकलुभावनवाद की तरफ) झुकती है।

(जे जी): पूर्व में, पूंजीवाद की असमानताओं का प्रतिरोध करने वाले आंदोलनों की स्पष्ट रूप से अंतर्राष्ट्रीय बनने की आकांक्षा रही है। क्या आप आज राष्ट्रीय स्तर पर काबू पाने की कोशिश कर रहे आंदलनों की प्रासंगिकता और स्थान को देखते हैं, या राष्ट्र–राज्य के सामरिक लाभ इस क्षण के लिए सबसे अच्छे विकल्प हैं?

(**आर के**): जैसा कि मैंने सुझाव दिया है, राष्ट्र–राज्य राजनीति और लोकतान्त्रिक नागरिकता का ठिकाना है। लेकिन, जैसा ब्रेटन वुड्स समझौते और आईएलओ सम्मलेन दर्शाते हैं, अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं श्रमिक एकजुटता अंतर्राष्ट्रीय पूंजी की शक्ति के प्रतितोलक भार के रूप में बहुत महत्वपूर्ण है। समस्या यह है कि ब्रेटन वुड्स काल अपवाद था। ज्यादातर परिस्थितियों में, व्यवहार में अंतर्राष्ट्रीयतावाद पूंजी का अंतर्राष्ट्रीयकरण है न कि नागरिकता का।

(जे जी): आपके कृत्यों में, आप वर्णन करते है कि "मिश्रित अर्थव्यवस्थाओं" ने कैसे द्वितीय विश्व युद्ध पश्चात के यूरोप और अमेरिका में अभूतपूर्व सम्पन्नता प्रदान की है। क्या आप "मिश्रित अर्थव्यवस्था" की प्रणाली एवं लोकतंत्र एवं राज्यों की स्वायत्ता के साथ इसके संबंधों का वर्णन कर सकते हैं?

(**आर के**): मिश्रित अर्थव्यवस्था अर्थशास्त्री पॉल सैमुएलसन की एक शब्दावली थी जो एक ऐसी अर्थव्यवस्था के लिए काम में ली गयी थी

>>

जो मूल रूप से पूंजीवादी थी लेकिन जिसे एक कल्याणकारी राज्य द्वारा और कुछ मामलों में सार्वजनिक नियोजन और सार्वजनिक स्वामित्व द्वारा और अन्य प्रमुख उद्योगों के सख्त नियंत्रण द्वारा पूरक किया जाता है। मिश्रित अर्थव्यवस्था में कृषि के विनियमन, वैध सामाजिक साझेदार के रूप में ट्रेड युनियनों का राज्य सशक्तिकरण और विशुद्ध पूंजीवाद को सीमित करने में सरकार के अन्य उपयोग भी सम्मिलित हैं। चूँकि नागरिकता राष्ट्र–राज्य के स्तर पर अभिव्यक्त की जाती है, इनमे से अधिकांश नीतियाँ राष्ट्रीय स्तर पर क्रियान्वित की जाती हैं। दूसरी तरफ, संघ के साथ यूरोप के अनुभव ने पूंजीवाद के विनियमन को कमजोर किया है और पूंजी को मजबूत किया है। इसे हायेक ने पहले ही देख लिया था और इसका स्वागत किया था। पोलान्यी के लिए, आर्थिकी या राजनीति के रूप में, एक मिश्रित अर्थव्यवस्था ही पर्याप्त नहीं थी। एक लोकतान्त्रिक समाजवाद की आवश्यकता थी।

(जे जी): कई देशों में वामपंथ के लिए एक पुराना प्रश्न लगातार बना रहता है: एक अकेले राष्ट्र में लोकतांत्रिक समाजवाद कैसे जीवित रह सकता है और वैश्विक पूंजीवाद के दबावों का प्रतिरोध कर सकता है? क्या पोलान्यी इस दुविधा के बारे में कोई अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं?

(आर के): इसके लिए प्रमुख देशों में या तो वामपंथी सरकारों की या वैश्विक वित्त की ताकतों के खिलाफ स्पष्ट अवरोधो की आवश्यकता है। पोलान्यी का दुलारा रेड वियना लगभग पंद्रह वर्षों तक चला। फिर यह बड़ी ताकतों द्वारा ध्वस्त किया गया। द्वितीय विश्वयुद्ध के दो या तीन दशकों तक और स्वीडन में इस के बाद भी कम से कम सामाजिक लोकतंत्र जैसा कुछ था चाहे वह लोकतांत्रिक समाजवाद न हो। अतः यदि नागरिकों को लामबंद किया जाता है एक देश में लोकतांत्रिक समाजवाद कम से कम एक या दो पीढ़ियों तक जीवित रह सकता है। और जैसा कि कीन्स ने प्रसिद्ध रूप से लिखा था, अंततोगत्वा सब मृत हैं। हालांकि यदि वैश्विक प्रणाली घरेलू सामाजिक लोकतंत्र के प्रति काफी प्रतिकूल है, स्वीडन या डेनमार्क में पायी जाने वाली सहमति–जन्य प्रणाली भी जोखिम में हैं। सामाजिक लाभ और समुचित मजदूरी को वैश्विक स्तर पर अप्रतिस्पर्धात्मक करार किया गया है। विश्ववाद घरेलू नियमों को कमतर करता है। एक महाद्वीप पर वैश्विक नवउदारवाद का प्रतिधिनित्व करने वाले द यूरोपियन कोर्ट ऑफ़ जस्टिस ने स्कैंडेनेविया के सामाजिक अनुबंधों के कई पक्षों को यूरोपियन संघ के मूल कानूनों के साथ असंगत करार किया है। स्टॉकहोलम और कोपनहेगन में नवउदारवादियों के सत्ता में एक बार आने के बाद उन्होंने सामाजिक सुदृढ़ता के सांस्थानिक तर्क को जानबूझ कर कमतर करना प्रारंभ कर दिया। इसलिए हमें वैश्विक प्रणाली को दुहराने के साथ प्रत्येक देश में घरेलु राजनीति को पुनर्प्राप्त करने की आवश्यकता है। ये दोनों चीज़े एक साथ जाती हैं।

(जे जी): वैश्विक पूंजीवादी के तहत लोकतंत्र को बनाये रखने के लिए आप ताकतवर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं के पक्ष में तर्क देते हैं। आपकी समझ में, नागरिकता के माध्यम से बनाए रखी गई वैश्विक असमानताओं और राज्य की मजबूती के बीच मध्यस्थता करने के लिए क्या आवश्यक है?

(आर के): मुझे लगता है कि एक न्यायप्रिय अर्थव्यवस्था को मुख्य रूप से राष्ट्रीय होना चाहिए क्योंकि लोकतांत्रिक नागरिकता राष्ट्रीय है। हालांकि धनी देशों के नागरिक, जो दुनिया के संसाधनों के एक असमानुपातिक भाग का उपयोग करते हैं, की पर्यावरणीय संवहनीयता और अधिक वैश्विक आर्थिक इक्विटी के कार्य करने की जिम्मेदारी है। अबंध नीति वैश्विक आय को बराबर करने की कोशिश करने का एक तरीका है लेकिन ऐसा यह देशों के भीतर राजनीतिक और आर्थिक असमानता को बढ़ाकर करता है। इस तरह वे लोकतंत्र को अपमानित करती है और साथ ही जलवायु तबाही को संबोधित करने में भी विफल रहती है। जैसा कि निकोलस स्टर्न ने प्रसिद्ध रूप से कहा, वैश्विक जलवायु परिवर्तन इतिहास में बाजार की विफलता का सबसे बड़ा मामला है। हम अबंध नीति को बाधित करके, न कि उसे मुक्त कर, जलवायु न्याय और अधिक वैश्विक समानता को प्राप्त करते हैं।

(जे जी): प्रवासन और उड़ान द्वारा महत्वपूर्ण रूप से आकारित युग में, अपनी अंतर्निहित असमानताओं के साथ नागरिकता की अवधारणा विरोधाभास के बिना नहीं है। लोकतांत्रिक अधिकारों को नागरिकता की स्थिति से अलग करने जैसी मांगों को आप कैसे देखते हैं?

(आर के): हां यह मुश्किल है। यदि आप लोकतंत्र लाना चाहते हैं, तो वह अपरिवर्तनीय रूप से सदस्यता के मुद्दे को उठाता है। लोकतंत्र के सदस्यों को नागरिक माना जाता है यह कहने के साथ, एक सभ्य लोकतंत्र के नागरिकों के लिए बुनियादी मानवाधिकारों का विस्तार करता है, चाहे वे वोट देने के लिए सक्षम न हो। गैर–नागरिकों को विदेशी माना जाता है, किसी को भी मौलिक मानवाधिकारों से अलग नहीं माना जाना चाहिए। मानवाधिकारों पर बुनियादी संधियों और कन्वेंशंस का यही उद्देश्य है। सामान्य तौर पर, स्कॅन्डिनेवियन जैसे मजबूत लोकतंत्र उन लोगों के लिए भी बुनियादी सार्वभौमिक अधिकारों का समर्थन करते हैं जो उनके नागरिक नहीं है।

लेकिन ये संधियां और कन्वेंशंस राष्ट्रीय हस्ताक्षरकर्ताओं द्वारा अपनी स्वीकृति और प्रवर्तन के रूप में ही अच्छे हैं। 1951 का द कन्वेंशन ऑन रेफुजीस, जिस पर 145 राष्ट्रों ने हस्ताक्षर किये हैं और इसका अनुसमर्थन किया है, के अनुसार देशों को उत्पीड़न से स्पष्ट रूप से भयभीत आवेदकों को शरण देने की आवश्यकता है। कन्वेंशन शरणार्थियों को अदालत तक पहुंच भी प्रदान करता है लेकिन कन्वेंशन के स्पष्ट प्रावधान और व्यापक सोच की व्यापक रूप से अनदेखी और अवहेलना की गई क्योंकि आप्रवासियों और शरणार्थियों के प्रति बैरी राष्ट्र आर्थिक और राजनीतिक शरणार्थियों के मध्य अंतर की कल्पना करते हैं और शरण मांगने वालों के जीवन को दुश्भर बनाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संघ के कन्वेंशन द्वारा कामगारों के प्रदत्त बुनियादी मानवाधिकारों जिसे हर प्रमुख राष्ट्र द्वारा सहमति दी गई है, के सम्बन्ध में इसी प्रकार की टालमटोली व्यापक रूप से देखी जाती है।

(जे जी): कोविड–19 एवं अनुवर्ती आर्थिक सामाजिक और राजनैतिक घटनाक्रमों के कारण कई देश गहरे संकट की ओर बढ़ रहे हैं। आपके विचार में पूंजीवाद और लोकतंत्र के मध्य संबंधों के लिए क्या जोखिम है?

(आर के): महामारी प्रभावी शासन की आवश्यकता और जन–स्वास्थ्य संकट को दूर करने में निजी बाजार की अक्षमता को प्रदर्शित करती है। टीके और परीक्षण व्यवस्था सामाजिक वस्तु हैं। प्रभावी राष्ट्रीय सरकारों वाले देशों ने वायरस के प्रसार को रोकने के लिए बहुत अच्छा कार्य किया है। उन्होंने विश्व स्वास्थ्य संगठन, निजी गैर सरकारी संगठनों के साथ मिलकर ऐसा किया है, लेकिन नेतृत्व सरकारी रहा है। यदि डोनाल्ड ट्रंप एक सक्षम फासीवादी थे, तो उन्होंने एक महत्वकांक्षी तानाशाह की प्रभावकारिता का प्रदर्शन किया हो सकता है। लेकिन वे अक्षम होने के साथ–साथ भ्रष्ट भी साबित हुए जो कि ऐसी सरकार की आवश्यकता को दर्शाता है जो प्रभावी और लोकतांत्रिक रूप से जवाबदेह हो ना कि केवल मजबूत। ■

सभी पत्राचार रॉबर्ट कुत्तनेर को <kuttner@prospect.org> पर प्रेषित करें।

दक्षिण एशिया में जलवायु प्रवास

मोहम्मद रिज़वान सिद्दीकी, ईस्ट वेस्ट विश्वविद्यालय, बांग्लादेश द्वारा

मंगोलिया में एक दज़ुद (dzud) नामक एक जलवायु प्रघटना जो अत्यधिक तेज सर्दी का वर्णन करती है, काफी जल्दी जल्दी घटित होती है। सूखी गर्मियों के साथ मिलकर विशेष रूप से यह पशुधन में, जिस पर अधिकांश आबादी खाने के लिए निर्भर है, बड़ी संख्या में मौतों को अग्रेषित करती है। श्रेयः एशियाई विकास बैंक/फ्लिकर.कॉम। कुछ अधिकार सुरक्षित।

लगभग 1.836 बिलियन की अनुमानित आबादी (वैश्विक आबादी का लगभग एक चौथाई) के साथ दक्षिण एशिया (जिसमें अफगानिस्तान बांग्लादेश, भूटान, पाकिस्तान, नेपाल, भारत, और श्रीलंका सम्मिलित है) दुनिया की सबसे घनी आबादी वाले क्षेत्रों में से एक है। तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाए, निरंतर रूप से सुधरते मानव विकास और तीव्र नगरीकरण के साथ दक्षिण एशिया वैश्विक विकास की लड़ाई का नवीनतम क्षेत्र बन गया है।

प्रवासन हमेशा से दक्षिण एशिया के लोगों के जीवन का एक भाग रहा है। निसंदेह असमान आर्थिक वृद्धि दक्षिण एशिया में गतिशीलता का एक प्राथमिक चालक है। हालांकि पर्यावरणीय कारकों का प्रभाव भी हमेशा प्रमुख रहता है। आवर्ती प्राकृतिक आपदाओं और कृषि संकट की जोखिम को कम करने के लिए लोगों की आवर्ती प्राकृतिक आपदाओं देशांतरण (अस्थाई/मौसमी/स्थाई रूप से) के प्रमाण प्रागैतिहासिक कथाओं में पहले से ही आम थे। दक्षिण एशिया में गतिशीलता का हावी व्यवहार आंतरिक प्रवाह है (मुख्य रूप से ग्रामीण से शहर की तरफ)। प्रवासियों (अधिकांशतः आर्थिक/श्रम प्रवास) के वार्षिक बहिर्वाह में पर्याप्त वृद्धि के साथ, विशेष रूप से पिछले कुछ दशकों से, इस क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय गतिशीलता भी असामान्य नहीं है। दक्षिण एशियाई देशों के लोगों का पारदेशीय गमन उनके लम्बे समय के साझे इतिहास, सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन शैली में समानता और छिद्रित सीमाओं के कारण भी प्रमुख है।

दक्षिण एशिया के जलवायु परिवर्तन की वास्तविक भेद्यता जैव भौतिक भेद्यता (जलवायु मानकों में परिवर्तन और उसके परिणामस्वरूप मौसमी प्रघटनाओं में तीव्रता) से इतना नहीं हुई जितना कि अपने समाज की सामाजिक–आर्थिक भेद्यता (ख़राब सामाजिक–आर्थिक स्थिति, उच्च निर्धनता दर, कृषि पर उच्च निर्भरता, अपर्याप्त बुनियादी ढांचा, कमजोर शासन इत्यादि) से हुई है। आंतरिक विस्थापन 2020 पर वैश्विक रिपोर्ट के अनुसार, प्राकृतिक आपदाओं (बाढ़, मानसून वर्षा, और चक्रवात) के कारण 2019 में दक्षिण एशिया में लगभग 9.5 मिलियन लोग विस्थापित हुए थे। इन सभी खतरों की तीव्रता, आवृति और प्रभाव बदलती जलवायु से प्रभावित होती है, के बारे में पहले से ही पर्याप्त साक्ष्य हैं। समस्या के समाधान के प्रयासों पर निर्भर होते हुए, विश्व बैंक के अनुसार, 2050 तक 18–40 मिलियन अतिरिक्त जलवायु प्रवासी हो सकते हैं।

दक्षिण एशिया में जलवायु परिवर्तन प्रवास की कुछ अनोखी विशेषताएं हैं। पहला, दक्षिण एशिया में प्रवास का मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन नहीं है लेकिन यह काफी हद तक अन्य सामाजिक–आर्थिक कमजोरियों के साथ प्रवास जोखिम को उत्तेजित करने के लिए अंतर्क्रिया करता है। इस बात के बढ़ते हुए प्रमाण हैं कि जलवायु परिवर्तन पहले से ही असामाजिक और आजीविका सुरक्षा को गड़बड़ कर आर्थिक समृद्धि को कम कर रहा है। इसके अलावा, जलवायु परिवर्तन पहले से ही पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं, खाद्य सुरक्षा, मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ दक्षिण एशिया में कृषि क्षमता एवं निर्वाह आजीविका को भी प्रभावित कर रहा है।

दूसरा, हमें यह समझने की आवश्यकता है कि दक्षिण एशिया में अधिकांश आतंरिक प्रवास आर्थिक कारणों से होता है, जबकि अधिकांश पारदेशीय एवं अंतरराष्ट्रीय प्रवास राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों के मिश्रित प्रभाव के कारण हुए हैं। जलवायु परिवर्तन इन कारकों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में को बढ़ा रहा है।

>>

एशिया में, टाइफून काफी अधिक आते हैं और लोगों की आजीविका को नष्ट करते हैं। श्रेयः एशियाई विकास बैंक/फ्लिकर.कॉम। कुछ अधिकार सुरक्षित।

तीसरा, अधिकांश मामलों में, जलवायु प्रवासियों को अन्य से अलग करना आसान नहीं है। प्रयास किए गए हैं, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। पूरे दक्षिण एशिया में गतिशीलता व्यवहार की एक विस्तृत श्रंखला मिलती है जो व्यक्तियों या समुदायों द्वारा अपने जीवन और आजीविका पर जलवायु परिवर्तन एवं अन्य खतरों के प्रभाव को न्यून करने के लिए अपनाई जाती है। इन सभी को एक फ्रेमवर्क में रखना असंभव है। अतः आर्थिक और राजनीतिक प्रवास के संयोजन में एक जल वायु प्रवाह फ्रेमवर्क का निर्माण करना और गतिशीलता व्यवहार (कोई भी) पर जलवायु परिवर्तन का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव की भूमिका की जांच करना उपयोगी हो सकता है।

चौथा, जलवायु परिवर्तन एवं प्रवाह संचालकों के मध्य अंतर्क्रिया के बारे में आंकड़े गंभीर रूप से दक्षिण एशिया तक सीमित हैं जिसका परिणाम आखिरकार कमजोर नीति निर्माण एवं प्रवास प्रबंधन में होता है। इसके अलावा, जलवायु परिवर्तन एवं प्रवास के अन्य कारकों को (राजनीतिक आर्थिक या सामाजिक) के मध्य अंतर्क्रिया को अभी समझना बाकी है, विशेषकर सूक्ष्म–स्तर पर।

पाँचवाँ, दक्षिण एशिया में, जलवायु परिवर्तन मुख्य रूप से आंतरिक प्रवास का कारण रहा है। यह प्रवास अक्सर अस्थाई या मौसमी गतिशीलता के रूप में प्रारम्भ होता है, और फिर स्थाई प्रवास में बदलता है। अधिकांश प्रवासी नगरीय क्षेत्रों की तरफ जाते हैं, और अक्सर प्रवास नेटवर्क और स्टेप माइग्रेशन पैटर्न का पालन करते हैं।

छठा, पारदेशीय जलवायु प्रवास पहले से ही क्षेत्र के लिए एक विवादित मुद्दा है। इसकी प्रकृति पैटर्न और भविष्य के बारे में राष्ट्रों एवं सरकारों के मध्य कोई सहमति नहीं है। इन मुद्दों को और अधिक जटिल करते हुए, हम देख सकते हैं कि यह पहले से ही क्षेत्र में एक अत्यधिक राजनैतिक मुद्दे के साथ एक (उत्तेजित) सुरक्षा चिंतन का मुद्दा बन गया है।

सातवां, इस क्षेत्र के देश कई विकसित अर्थव्यवस्थाओं के लिए प्रवास सस्ते श्रम का प्राथमिक स्रोत हैं, जो अधिकतर द्विपक्षीय समझौतों के माध्यम से प्रबंधित होता हैं। दुर्भाग्य से, इस क्षेत्र के इन देशों के मध्य तीव्र प्रतिस्पर्धा है। कभी–कभी परिणामी श्रम प्रवासन को जलवायु प्रवासियों की अनुकूलन की एक प्रक्रिया के रूप में माना जाता है जो शायद ही सच है।

आठवां, गतिशीलता और (गतिहीनता) निर्णयों के परिणाम प्रवासी एवं जिन समाजों में वे प्रवास करते हैं की क्षमता पर उच्च रूप से निर्भर होते हैं। जलवायु प्रवास को समायोजित करने की समाजों (विशेष रूप से नगरों) की क्षमता अब तक बहुत बड़ी नहीं है। पर्यावरणीय और जलवायु प्रवासी अभी भी समाज के किनारे पर रहने और जीवित रहने के लिए मजबूर हैं।

नौवां, दक्षिण एशियाई देशों की प्रवास नीति शासन मुख्य रूप से गंतव्य (नगरीय) क्षेत्रों में पहले से ही बाधित संसाधनों और सेवाओं का प्रबंध करने के लिए, जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली किसी भी गतिशीलता को रोकने की तरफ लक्षित होती है। इन प्रवासियों की क्षमता विकास और प्रवासी प्रक्रिया को बेहतर ढंग से समायोजित करने के उद्देश्य से बहुत कम प्रयास किए जाते हैं। हाल में ही, भारत और बांग्लादेश ने द्वितीयक माध्यमिक नगरों को प्रवास–अनुकूल नगर बनाने के लिए पहलें प्रारम्भ की हैं। हालांकि सामाजिक न्याय को संबोधित करने में विफलता और मानव–केंद्रित विकास नियोजन के अभाव के कारण इन नीतियों को अक्सर अप्रभावी पाया जाता है। इन प्रयासों की सफलता आज भी पारम्परिक अभिजनों की पकड़ और व्यापक भ्रष्टाचार आज भी महत्वपूर्ण बाधाएं हैं।

दुर्भाग्य से, इन मुद्दों के प्रबंधन के बारे में दक्षिण एशियाई राज्यों के मध्य बहुत कम फलदायी सहयोग है। प्रयास अधिकतर शैक्षणिक और अनुसंधान क्षेत्र तक ही सीमित है और विकास नियोजन में परिलक्षित नहीं होते हैं। एक व्यापक राष्ट्रीय जनगणना के के माध्यम से अल्प आंकड़ों के मुद्दे को संबोधित करने की पहलें भी पर्याप्त हैं। जलवायु प्रवासियों की पहचान करने के प्रयासों के बिना और साथ ही राज्य एवं क्षेत्रीय नीतियों के माध्यम से मामले को संबोधित करने के लिए हमारे लिए बहुत कम उम्मीद बची। ■

सभी पत्राचार मोहम्मद रिजवान सिद्दीकी को <rezsid@ewubd.edu> पर प्रेषित करें।

> जलवायु संकट और लोकतंत्र का प्रश्न

मार्कस विसेन, बर्लिन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स एंड लॉ, जर्मनी द्वारा

अगर हम जलवायु संकट, जलवायु नीति और उदार लोकतंत्र के बारे में सोचते हैं, तो सर्वप्रथम ध्यान आकर्षित करने वाला एक तनाव हैः प्रभावी जलवायु नीतियों से उदार लोकतंत्रों की शर्तों के तहत जलवायु संकट से लड़ना काफी कठिन प्रतीत होता है। इसे अंतर्राष्ट्रीय संधियों के खराब प्रभावों से रेखांकित किया जाता है, जिन पर (ज्यादातर) उदार–लोकतांत्रिक राज्यों ने हाल के दशकों में सहमति व्यक्त की है। 1997 के क्योटो प्रोटोकॉल ने वैश्विक कार्बन उत्सर्जन को बढने से रोकने में मदद नहीं की, और स्वयं को अधिक भावी जलावयु नीति प्रयासों के लिए प्रतिबद्व करने हेतु पेरिस समझौते (2015) के लिए कई पक्षों की हिचकिचाहट एक प्रभावी भावी जलवायु नीति में विश्वास करने के लिए बहुत कम कारण देती है। इसके अलावा, यदि हम इस बात पर ध्यान दें कि राज्य भारी पर्यावरणीय समस्याओं और एक कार्बन–गहन विकास मॉडल के बावजूद चीन जैसे सत्तावादी राज्य प्रमुख पर्यावरणीय और अक्षय उर्जा कार्यक्रमों को लागू करने में सक्षम है तो, प्रश्न उठता है कि क्या उदार लोकतंत्र वास्तव में मानव जाति की सबसे प्रमुख समस्याओं में से एक का मुकाबला करने के लिए तैयार है।

> उदार लोकतंत्र एवं पूंजीवादी–एक संरचनात्मक आत्मीयता

जलवायु संकट, जलवायु नीति और उदार लोकतंत्र के मध्य ऐतिहासिक एवं अनुभवजन्य तनावों के जड़ में एक अधिक व्यवस्थागत समस्या है। लोकतंत्र का सार समानता है। उदार लोकतंत्र राजनीतिक क्षेत्र में सभी नागरिकों की समानता का प्रावधान करता हैः चुनाव में कार्यकर्ता का मत भी उतना ही महत्व रखता है जितना एक सी.ई.ओ. का। एक विधिक व्यक्ति के रूप में सी.ई.ओ. को कार्यकर्ता की तुलना में कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। निःसंदेह, यह एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। लेकिन यह सिक्के का केवल एक पहलू है। दूसरे पहलू में यह तथ्य शामिल है कि उदार लोकतंत्र सामाजिक शक्ति केन्द्रों को व्यवस्थित रूप से समान भागीदारी से अलग करता है। उद्यमी निर्णय निजी होते हैं, केवल उन ढांचागत स्थितियों, जिनके तहत उन्हें लिया जाता है, को सार्वजनिक रूप से प्रभावित किया जा सकता है। इसके अलावा, हितधारक अर्थात वे सब जो निर्णय के परिणाामों से प्रभावित होते है–श्रमिक, कारखाने के आस–पास के समुदाय, व्यापक जनता के लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया में समान रूप से भाग लेने का कोई मौका नहीं है।

यहां पर उदार लोकतंत्र और पूंजीवाद के मध्य संरचनात्मक आत्मीयता दिखाई देती है। उदार–लोकतांत्रिक पूंजीवादी राज्य नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों के साथ–साथ निजी संपत्ति की सुरक्षा करते हैं; यह राजनीतिक क्षेत्र में समानता की गारंटी देता है और उसी समय यह मूलभूत सामाजिक–आर्थिक असमानता के समक्ष तटस्थ है, जो इस तथ्य से उपजती है कि कुछ लोग उत्पादन के साधनों का निपटान करते है और अधिकांश के पास अपनी श्रम शक्ति को बेचने से अधिक कुछ नहीं है।

अतिरिक्त–आर्थिक समानता और आर्थिक असमानता के मध्य विरोधाभास स्थायी संघर्षों के अधीन हैं। पूर्व में इन संघर्षों के परिणामस्वरूप वैश्विक उत्तर में उदार लोकतंत्र के कई विस्तार हुए हैंः महिलाओं ने मताधिकार के लिए और सामाजिक पुनरूत्थान में राज्य की अधिक मजबूत भूमिका के लिए सफलतापूर्वक संघर्ष किया; पर्यावरणीय आंदोलनों ने जोखिम वाले उत्पादों और उत्पादन प्रक्रियाओं पर प्रतिबंध लगाने में सफलता प्राप्त कीः प्रवासियों ने नागरिकता के विस्तार के लिए संघर्ष किया है; और श्रमिक आंदोलन के संघर्षों के फलस्वरूप एक वर्ग समझौता हुआ है जिसमें मूल रूप से धन सम्पदा के बदले में पूंजीवादी उत्पादन के तरीकों में श्रमिकों की अधीनस्थ भूमिका की स्वीकृति सम्मिलित है। जिससे परिवर्ती की सुविधा बढ जाती है। सामाजिक लोकतंत्र इसी के लिए खड़ा हैः कल्याण राज्यों की दिशा में उदार लोकतंत्र का विस्तार जो पूंजीवादी समाजों की संवैधानिक असमानता को चुनौती नहीं देते है बल्कि इसके विरोधाभासों को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

> कार्बन लोकतंत्र

पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य से समस्या यह है कि सामाजिक रूप से परिष्कृत उदार लोकतंत्र हमेशा से दोहरे अर्थ में एक कार्बन लोकतंत्र (टिमोथी मिशेल) रहा हैः पहला, बीसवीं शताब्दी के दौरान जिन सामाजिक अधिकारों को संस्थागत रूप दिया गया वो कम से कम कोयला खनन एवं कोयला खनन से सम्बंधित परिवहन अवसंरचना में श्रमिकों के संघर्षों के परिणामस्वरूप नहीं है। अर्थात सभी प्रकार की आर्थिक और सामाजिक गतिविधियों के लिए आवश्यक, पर्यावरणीय रूप से विनाशकारी क्षेत्रों में, ताकि श्रमिक विशिष्ट संरचनात्मक शक्ति का निपटान कर सकें। दूसरा, कल्याणकारी राज्य के पुनर्वितरण संस्थान इस तरह डिजाइन किये गये हैं कि वे कार्बन–गहन आर्थिक विकास पर निर्भर हैं।

यह उदार लोकतंत्र पूंजीवाद के राजनीतिक स्वरूप के रूप में बुनियादी पर्यावरणीय विरोधाभास हैः आर्थिक लाभों को अधिकतम करने और बुनियादी सामाजिक विरोधाभासों को विनियमित करने की बाधाएं आवश्यक रूप से सामाजिक–पारिस्थितिक लागत को उत्पन्न करती हैं जो अब एक अस्तित्वगत संकट में फलीभूत होने वाला है। जब तक उदार–लोकतांत्रिक और पूंजीवादी परिस्थितियों में जलवायु संकट से मुकाबला करने की प्रणालीगत सीमाओं का स्वीकार नहीं किया जाता है, तब तक प्रभावी जलवायु नीतियां विफल होंगी।

उन्हें स्वीकार करने का अर्थ सत्तावादी समाधानों पर लौटना बिल्कुल नहीं है। यद्यपि परवर्ती शायद थोड़े समय में कुछ

>>

"जब तक उदार–लोकतांत्रिक और पूंजीवादी परिस्थितियों में जलवायु संकट से मुकाबला करने की प्रणालीगत सीमाओं का स्वीकार नहीं किया जाता है, तब तक प्रभावी जलवायु नीतियां विफल होंगी।"

पर्यावरणीय उपायों की प्रवर्तनीयता और त्वरण को सूचित करें, दीर्घकाल में सफल होने के लिए उनमें आवश्यक चिंतनशीलता का अभाव होता है।

> अतिवादी लोकतंत्र

चिंतनशीलता विचार विमर्श को पहले से मान कर चलती है और विचार–विमर्श केवल लोकतांत्रिक परिस्थितियों में ही संभव है। अतः जलवायु संकट से मुकाबला करने के लिए कम नहीं बल्कि अधिक लोकतंत्र की आवश्यकता है। उदार लोकतंत्र को उसकी अन्तर्निहित सीमाओं से परे धकेलने की आवश्यकता है। उनकी उपलब्धियां जो वर्तमान में सत्तावादी दक्षिण द्वारा कड़े हमले के अधीन है, को एक अतिवादी लोकतंत्र में बदलकर बचाया जाना चाहिए। इसका मतलब है कि निर्णय से प्रभावित होने वाले सभी लोगों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में समान रूप से भाग लेने का अधिकार है। इस प्रकार पर्यावरणीय रूप से चिंतनशील निर्णयों की संभावना बढ जायेगी, चूंकि जो लोग निर्णय लेते है वे ही उस निर्णय के परिणामों को वहन भी करते है। इसके अलावा, अतिवादी लोकतंत्र का अर्थ ऐसी संस्थाएं और प्रक्रियाओं को बनाना होगा जो व्यवहार के ठोस रूपों को सकारात्मक मंजूरी दे और इस तरह लोकतांत्रिक शिक्षा और विषयवस्तु की प्रक्रियाओं का समर्थन करें जो उपयोगिता–अधिकतम करने वाली पूंजीवादी विषयपरकता को दूर करने में मदद करें।

अतिवादी लोकतंत्र के लिए एक ठोस प्रवेश बिंदु जिसे मूलभूत अर्थव्यवस्था या अधिसंरचना समाजवाद कहा जाता है, हो सकता है। यह सामाजिक और पर्यावरणीय रूप से उपयोगी उत्पादन एवं सेवाओं के दृष्टिकोण से अर्थव्यवस्था पर पुनर्विचार करने और पुनर्निदेशित करने के बारे में है: देखभाल जिस पर हम सब निर्भर हैं और स्वास्थ्य, भोजन, गतिशीलता, संस्कृति, संचार, जल एवं बिजली जैसे क्षेत्रों में जीवन–रक्षक अधिसंरचना को सार्वजनिक नियंत्रण में लाने में बड़ा अनुभव है – ऐसा अनुभव जिसे हाल के दशकों में नवउदारवादी हमलों को झेलना पड़ा है लेकिन कई स्थानों पर कोरोना महामारी के दौरान इसका पुनरूत्थान हुआ है। इसे श्रम के लैंगिक विभाजन पर काबू पाने के लिए साथ चलना होगा। और इसे अभी भी बड़े निगमों द्वारा चलाये जा रहे अन्य क्षेत्रों में विस्तारित किया जा सकता है लेकिन इसे जलवायु संकट को और अधिक बढाने से रोकने के लिए लोकतांत्रिक नियंत्रण के अंतर्गत रखना होगा। ■

सभी पत्राचार मार्कस विसेन को <markus.wissen@hwr-berlin.de> पर प्रेषित करें।

> पूंजीवाद के बाद :

लोकतांत्रिक पर्यावरणीय–समाजवाद?

विश्वास सतगर, विटवाटरसैंड, विश्वविद्यालय, दक्षिण अफ्रीका द्वारा

दक्षिण अफ्रीका में 29 नवंबर, 2019 को जोहान्सबर्ग स्टॉक एक्सचेंज के बाहर आयोजित #फ्राईडेज फॉर फ्यूचर प्रदर्शन। श्रेयः विश्वास सतगर

समकालीन पूंजीवाद के कार्बन–केन्द्रित जीवनकाल में गैस–पीने वाली गाड़ियॉं, हाईटेक विमान, विशाल कंटेनर जहाज और उर्जा की खपत करने वाली गगनचुंबी इमारतें सामूहिक विनाश का हथियार हैं। ये संसाधन–गहन और कार्बन–केन्द्रित सामाजिक संबंध जितने अधिक प्रबल होगें, उतना ही जलवायु परिवर्तन तीव्र होगा। पृथ्वी प्रणाली को फोड़ने के बाद, यह नई पूंजीवादी प्रकृति जो वैज्ञानिक स्तर पर अवलोकित एवं प्रबंधित है, को पितृसत्तात्मक वर्चस्व के तहत, अब भू–अभियांत्रिक होना चाहिए एवं उत्सर्जित कार्बन को पृथ्वी ग्रह के गहरे अंतस्थल में भंडारित किया जाना चाहिए। पृथ्वी पर जीवन पर अनियंत्रित परिणामों के बावजूद, तेल के स्पिगॉट तभी बंद होंगे जब इस घातक संसाधन से अंतिम डालर को निचोड़ लिया जायेगा। समकालीन पूंजीवाद का तर्क केवल बेदखली के बारे में नहीं है, बल्कि इकोसाइड (प्राकृतिक पर्यावरण का नाश) के बारे में हैं अर्थात पृथ्वी पर मानवीय एवं गैर–मानवीय जीवन को बनाये रखने के लिए आवश्यक शर्तो का विस्मरण। इसे कार्ल मार्क्स ने ''पूंजीवाद की चयापचय दरार'' और रोजा लक्जमबर्ग ने ''प्राकृतिक अर्थव्यवस्था की विजय'' कहा।

> नवउदारवाद का टर्मिनस (अन्तिम स्टेशन)

नवउदारवाद के आदर्शो की पुष्टि इसके ऐतिहासिक टर्मिनस पर की गई है। सम्पत्ति अधिकारों ने पूंजी की संप्रभुता को जन्म दिया है, लालची प्लूटोक्रेट्स राज्य की शक्ति को तंत्रीकरण के अपरिष्कृत रूप से काम में लेते हैं और उपभोग के अमरीकी तरीकों और लोकप्रिय मीडिया द्वारा पुष्ट हाइपर–व्यक्तिवाद सेलेब्रिटी संस्कृति की तुच्छता की पुष्टि करता है। समकालीन नवउदार पूंजीवादी सभ्यता में मानव होने की एक मात्र अभिव्यक्ति अमेरीकीकृत और शून्य पूंजीवादी विषय का आत्म निरूपण है। लेकिन यह भी पर्याप्त नहीं है। अगला कदम ट्रांस–मानव हैः जैव और डिजीटल पूंजी की टेक्नोटोपियन दृष्टि। कई दशकों तक संरचनात्मक असमानता को गले लगाने के बाद, नवउदार पूंजीवादी यूटोपिया की दुनिया का अब मानवता के साथ कोई समान अभिप्राय नही है। यह शत्रुओं की अनुपस्थिति को देखते हुए ओर भी स्पष्ट हैः सोवियत समाजवाद मर चुका है, श्रमिक वर्ग असुरक्षित है, प्रकृति पर विजय पा ली गई है और इतिहास समाप्त हो गया है। दोष देने के लिए कोई लेफ्ट नहीं हैं, फिर भी वाशिंग्टन, ब्रासीलिया, नई दिल्ली, बुडापेस्ट से मॉस्को तक इस नवउदार व्यवस्था की नई दक्षिण पंथी, नव–फासीवादी संताने–इस युटोपिया के समक्ष आई किसी भी चुनौती को कुचलने के लिए तैयार है। ऐसा वे प्रवासी, अश्वेत व्यक्ति, ''मुस्लिम'', 'स्वदेशी' या कोई भी बढ़ाए गए ''आंतकी खतरे'' के खिलाफ आम जनता को गलत रूप से निर्देषित करते हैं।

ये शासन सत्तावादी और सैन्यीकृत हिंसा से निपटाये जाते हैं क्योंकि ये किसी भी कीमत पर पूंजीवाद की सामान्यता की रक्षा करना चाहते हैं। यद्यपि इतिहास और संघर्ष ने यह प्रदर्शित किया है कि सत्तावादी शासन व्यवस्था कितनी अवहनीय हैं। हिंसा पर एकाधिकार कभी भी शांति समझौते की गारण्टी नहीं है। अमरीकी सेना भी यह समझती/जानती है कि जब तक अमेरीका स्वयं जलवायु आघातों से त्रस्त है, वह जलवायु अराजकता की दुनिया को नियंत्रित नहीं कर सकता है। युद्ध के लिए दुर्लभ संसाधनों की आवश्यकता होती है और समाजों में जलवायु परितर्वन के द्वारा लाये गये कठिन विकल्पों के बावजूद, यह मँहगा होता है। परमाण ु हथियारों के युग में सैन्यवाद की भी बाधाऍं हैं। क्रूर असमानता का आधिपत्य शासन समाप्त हो गया है जबकि डेमोस बैचेन और हताश हैं। कोविड–19 ने कष्टों को और बढ़ा दिया है। उसी समय, डिजिटल स्त्रातों के बहुल प्रकारों से सामाजिक–पारस्थितिक

>>

परिस्थिति के बारे में आसान पहुँच के साथ लोकतांत्रिक विषय पर एक पूर्ण–स्पेक्ट्रम दृष्टि है। ऐसा विषय दूर से साम्राज्यवादी ताकतों की मूर्खता पर भी अचंभित हो सकता है, निरंकुशों के अनाडीपन का अवलोकन कर सकता है और वंचित जमीनी ताकतों के प्रेरक दावों की झलक को देख सकता है। अलग ढंग से कहें तो, जहाँ पूंजीवाद नव–फासीवादी विकल्पों का उपयोग करेगा और डिजीटल क्षेत्र को भी हथियार बनायेगा, पूर्ण उत्पीड़न का लौह पर्दा अजेय नहीं है। इसी परस्परछेदन पर लोकतंत्र और समाजवाद पनपेगें।

> पूंजीवाद के अंतिम खेल के रूप में इकोसाइड

इतिहास के वर्तमान क्षण में असली आतंक पूंजीवादी नव–फासीवाद नहीं है बल्कि पूंजीवादी इकोसाइड का प्रलयकारी बल है जो न केवल ग्रहों की जीवन स्थितियों को बल्कि खुद पूंजीवाद को जोखिम में डालता है। यह फासीवाद के द्वितीय आगमन को काल–भ्रमित बनाता है। जलवायु विज्ञान के खतरे की घंटी के बावजूद, वैश्विक उर्जा मिश्रण में कार्बन पूंजी के स्थान को बनाये रखने, कोविड–19 के दौरान मांग में सुस्ती और पृथ्वी पर प्रत्येक सप्ताह कम से कम एक प्रमुख जलवायु आघात को देखना काफी डरावना है। ट्रम्प ने अमरीका में अधिक कार्बन निष्कर्षण के लिए लाइसेंस प्रदान कर इसे आपूर्ति तालिकाओं के शीर्ष पर रखा है और बोल्सनारो उन वाणिज्यिक हितों का समर्थन करता है जो स्वदेशी लोगों के खिलाफ जातिसंहार हिंसा जारी रख जैव विविधता को नष्ट करते हैं और काट एवं दाह प्रत्याहरण के माध्यम से एमेजॉन से लगभग 140 बिलियन टन कार्बन उत्सर्जन रिहाई को तीव्र करते हैं। दक्षिण अफ्रीका में, कार्बन शासन वर्ग दुनिया में कोयले से चलने वाला सबसे बड़ा बिजली घर का निर्माण कर रहे हैं। वे शेखी बघार रहे हैं और अपतटीय गैस एव ंतेल निष्कर्षण की संभावनाओं पर लार टपकाते हैं। कार्बन अपराधिकता के ये उदाहरण पुष्टि करते हैं कि पूंजीवाद और उसके कार्बन शासक वर्गो ने प्रलयकाल की घड़ी को देखते हुए, स्वंय सहित, सभी को खतरे में डाला है।

इकोसाइडल पूंजीवाद का आत्म–घाती तर्क अब पूर्णरूप से स्पष्ट है। बर्लिन सम्मेलन के बाद से, वैश्विक उत्तर का साम्राज्यवादी विषय, अफ्रीका पर लम्पनबुर्जुआ हितों द्वारा कब्जा कर लिया गया है और उसका जलवायु शॉक के कारण पहले से ही अंशों में खुलासा हो रहा है। ऐसा अनुमान है कि कम से कम 200 मिलियन अफ्रीकी नागरिक बिगड़ते जलवायु झटकों एवं ब्रेकडाउन से विस्थापित होंगे। "फोर्ट्रेस यूरोप" और " प्रिजन काम्प्लेक्स यूएसए" बर्बरों को बाहर रखने में सक्षम नहीं होगे क्योंकि अपनी सम्पन्नता के बावजूद ये समाज जलवायु शॉक के कारण गंभीर आंतरिक दोषों का सामना करेंगे। द सनराइज मूवमेंट, एक्सटिंक्शन रिबेलियन और #फ्राइडेस फॉर फ्यूचर केवल 1 डिग्री सेल्सियस आंदोलन हैं। 1.5 डिग्री पर इन समाजों के कई और उभरेंगे जैसे ही लोग तर्कहीन और पारिस्थितिक–फासीवाद शासकीय वर्ग द्वारा संपार्श्विक क्षति के रूप में बर्त्ताव करने को खारिज करेंगे।

> लोकतांत्रिक पारिस्थितिक–समाजवाद की तरफ

कई लोगों की जीवित आशा को व्यक्त करते हुए, जलवायु न्याय व्यवधान के तीन रूप देखें जा रहे हैं। जीवित आशा की ऐसी अभिव्यक्तियॉं बच्चों और नागरिकों के साथ मिलकर जलवायु न्याय बलों के साथ एक समाभिरूपता ला रही हैं। पहला, सामान्य का प्रतीकात्मक व्यवधान हैं। इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण ग्रेटा थर्नबर्ग और बच्चों द्वारा फ्राइडे फॉर फ्यूचर बच्चों की प्रतिरोध क्रियाएँ हैं। बच्चों द्वारा उठाई गई खतरे की घंटी जलवायु विज्ञान की अत्यावश्यकता उलट तात्कालिकता को मजबूत कर रही है और इसके उलटे भी। दूसरा जीवाश्म ईंधन निष्कर्षण सर्किट सहित कार्बन को ग्रिडलॉक कर कार्यनीतिक व्यवधान डालना है। मैकडोन्ल्ड, वालमार्ट और सबवे के बहिष्कार का आह्वान, चूंकि उनके एमेजॉन में काट एवं दाह कृषि के हित में हैं, या जर्मनी में कोयले के गढढ़ो को अवरूद्ध करने के एंडे गेलेंडे के/प्रयास इसके उदाहरण हैं। तीसरा ग्रीन न्यू डील्स (जीएनडी) जैसे प्रणालीगत विकल्पों के माध्यम से इकोसाइडल पूंजीवाद का रणनीतिक विघटन है जो तीव्र विकार्बोनिकरण, विसैन्यीकरण, लोकतान्त्रिक प्रणालीगत सुधारों को नीचे से आगे बढ़ाते हैं ताकि एक न्याय पूर्ण संक्रमण और जलवायु न्याय की भू–राजनीति को प्राप्त करने के लिए लोग सक्षम बने। एक राजनैतिक परियोजना की अवधारणा के साथ बर्नी सैंडर्स की जीएनडी और दक्षिण अफ्रीका में जलवायु न्याय चार्टर इसके उदाहरण हैं। अंततः, इन ताकतों के पास साम्राज्यवादी ताकत के इकोसाइडल तर्क का सामना करने का कार्य भी होगा ताकि वे यह सुनिश्चित कर सकें कि वैश्विक दक्षिण स्वंय के जलवायु न्याय विकल्प बना सकता है जिसमें लोकतांत्रिक पारिस्थितिक–समाजवाद को आगे बढाने वाले गहन प्रणालीगत परिवर्तन सम्मिलित हैं।

एक महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक प्रणालीगत सुधार जिसे परिधि से और आगे वैश्वीकृत करना होगा, वह है खाद्य संप्रभुता एवं कृषि–पारिस्थितिकी के माध्यम से दुनिया का "पुनःकृषिकरण"। दो दशक पहले, ला वीवा कैम्पेसीना द्वारा प्रारंभ किये गये, दुनियाभर के प्रत्येक समुदाय, गॉंव, कस्बे और शहर को इस तरह के लोकतांत्रिक इको–समाजवादी विकल्प को अपनाना होगा। इसे जैव–विविधता एवं पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं के अतंर्राष्ट्रीय पेनल की हाल ही की जैव विविधता रिपोर्ट और भूमि–उपयोग रिपोर्ट द्वारा कमतर आंका गया है। अंतिम बात यह है कि एकल–औद्योगिक, कार्बन–क्रेन्द्रित एवं वैश्वीकृत खाद्य व्यवस्था हमारे विलुप्त होने में फंसे हुए हैं।

अंततः, समकालीन समाजवाद के पारिस्थितिक क्षितिज को जैविक आपदाओं (जैसे कोविड़–19), वैश्विक तापन, जलवायु आघातों, बिगड़ती असमानता और जीवित रहने की मानवीय इच्छा द्वारा परिभाषित किया जायेगा। जल, भूमि, जैव–विविधता, महासागर और जीव मंडल–जैसे वैश्विक कॉमन्स–सभी पूंजीवादी इकोसाइड के खिलाफ प्रकृति के बदले में फॅसने वाले हैं। प्रकृति की अनंतता और मानव की सीमितता सामाजिक–पारिस्थितिक इतिहास के अगले काल को परिभाषित करेंगी। इसी संगम पर लोकतांत्रिक पारिस्थितिक–समाजवाद जीवन को आगे बढ़ाने, उत्पादकतावद को खारिज करने और प्रकृति के साथ एक वि–अलगाव के संबंध को पुनः पुष्ट करने के लिए पृथ्वी पर स्वदेशी परम्पराओं से अधिक गहनता से सीखेगा। इसे मार्क्स ने 'सकारात्मक मानवतावाद" कहा है। प्रकृति के चयापचय चक्रों के भीतर कार्यरत एक धीमी दुनिया हमारी एकमात्र उम्मीद है। ऐसी दुनिया कभी नहीं मरी बल्कि इसे औपनिवेशिक, नवउदारवादी और साम्राज्यवादी हिंसा द्वारा पीछे ध ाकेल दिया गया था। ■

सभी पत्राचार विश्वास सतगर को <Vishwas.Satgar@wits.ac.za> पर प्रेषित करें।

> नगरीय जलवायु कार्यवाही

कैसे समुदायों का पुनर्निर्माण कर सकती हैं?

जोआन फिट्जगेराल्ड, नार्थ ईस्टर्न विश्वविद्यालय, यूएसए द्वारा

जून 2016 में वेस्ट ओकलैंड एनवायर्नमेंटल इंडीकेटर्स प्रोजेक्ट की एक रैली में सुश्री मार्गरेट गॉर्डोन। फोटो: ब्रुक एंडरसन। श्रेय: वेस्ट ओकलैंड एनवायर्नमेंटल इंडीकेटर्स प्रोजेक्ट।

कोविड–19 महामारी ने शहर के दो दर्शन का खुलासा किया है। एक चिकित्सीय एवं प्रजातीय रूप से अन्यायपूर्ण शहर है जो वर्तमान का यथार्थ है। अमेरिकी और यूरोपीय शहरों में, कम–आय वाले क्षेत्रों और रंगभेद वाले समुदायों में कोविड–19 से मृत्यु दर अधिक है। चूँकि वे ऐसे इलाकों में निवास करते हैं जो अत्यधिक प्रदूषित हैं, अमेरिका में अश्वेत और लातिनो अस्थमा और सम्बंधित बीमारियों के प्रति अति–संवेदनशील हैं जो उन्हें वायरस के प्रति अधिक असुरक्षित छोड़ देते है। उनके कम–आय वाली नौकरियों में होने की संभावना अधिक है जो उन्हें वायरस के संपर्क में लती है। भीड़ भाड़ वाले आवास का अर्थ है कि घर पर दूरी बनाये रखना असंभव है। और उनके इलाकों में पार्क और किराने की दुकानों जैसी बुनियादी सुविधाओं का अक्सर अभाव होता है।

लेकिन संकट ने एक और अवसर का खुलासा किया है: एक हरित, समानतापूर्वक वसूली जो जलवायु कार्यवाही को नस्लीय एवं आर्थिक न्याय से जोड़ती ही। हमारे फ्रंटलाइन समुदायों के लिए उस दृष्टि को बढ़ावा देना – वे इलाके जो जलवायु परिवर्तन के पहले और सबसे खराब प्रभावों को अनुभव करते हैं – एक जरुरी प्राथमिकता है। अधिकांश नगरीय जलवायु कार्यवाही योजनाएं या तो इक्विटी की बात नहीं करती हैं या फिर केवल ऊपरी तौर पर। लेकिन पूरे अमेरिका, कनाडा और यूरोप में सक्रिय कार्यकर्त्ता समूह अधिकाधिक शहरी सरकारों पर पहले जलवायु न्याय पर ध्यान केंद्रित करने के लिए दबाब डाल रहे हैं।

> लोकतान्त्रिक नियोजन

इस उद्यम के केंद्र में नियोजन है। कई शहरों में विशेष रूप से अमेरिका में, नियोजन निजी डेवेलपर्स और वाणिज्यिक खिलाडियों द्वारा संचालित होता है। अधिक लोकतान्त्रिक परिणामों के लिए अधिक लोकतान्त्रिक नियोजन की आवश्यकता होती ह।

ऑस्टिन, मेड्रिड, सीएटल, ओकलैंड, पोर्टलैंड, प्रोविडेंस और विएना उन शहरों में से हैं जिन्होंने अपनी जलवायु कार्यवाही या व्यापक योजनाओं को फ्रंट लाइन समुदायों के निवासियों द्वारा भागीदारी के लिए सोची समझी प्रक्रियाओं द्वारा अपडेट किया गया है। सबसे अच्छे मामलों में, निवासी समूह शहरी अधिकारीयों के साथ लक्ष्यों को सह–निर्माण करते है, न्याय लेंस से लक्ष्यों का विश्लेशण करते हैं और उनकी क्रियान्वति में संलग्न होते है।

ये योजनाएं फ्रंट लाइन इलाकों में सामाजिक, पर्यवरणीय और आर्थिक वहनीयता के निर्माण में सहयोग करती हैं। लागू होने वाले प्रोविडेंस क्लाइमेट जस्टिस प्लान के पहले तत्वों में से एक, त्वरित कार्यवाही हेतु दो हरित न्याय जोन्स–आलनेविले एवं दक्षिण प्रोविडेंस,

>>

का निर्माण हैं। जोन्स में संभावित प्रोजेक्ट में बिजली उत्पादन को बनाये रखने के लिए मुख्या सुविधाओं में माइक्रोग्रिड का निर्माण करना, मौसमीकरण, अक्षय ऊर्जा विकास, नौकरी प्रशिक्षण, और प्रदुषणकारी भूमि उपयोग को रोकने के लिए जोनिंग सुधर सम्मिलित हैं।

> हरित न्याय

हरित न्याय क्षेत्र जलवायु लक्ष्यों को सामाजिक न्याय लक्ष्यों के साथ जोड़ते हैं। यह विचार जलवायु एवं सामाजिक न्याय अजेंडे के सभी पक्षों को इस तरह संयोजित और एकीकृत करने का है जो एक सामुदायिक भवन में निवासियों को संलग्न करे। इसमें अक्षय ऊर्जा, गहन रेट्रोफिटिंग, सामुदायिक स्थान विकसित करना, नौकरी के अवसर पैदा करना, एक नया शुन्य–नेट–एनर्जी स्कूल, नए या पुनर्विकसित पार्क, पूरी सड़कें, ग्रीन छतें, और अधिक पेड़ सम्मिलित हो सकते हैं ताकि नगरीय हीट आइलैंड इफेक्ट एवं तूफ़ानी जल प्रबंधन हो सके।

ओकलैंड, कैलिफोर्निया ने भी अपने निर्धनतम इलाकों में कार्यवाही पर ध्यान केंद्रित किया है और जुलाई 2020 में जारी किये गए अपने 2030 एक्विटेबल क्लाइमेट एक्शन प्लान में इस पर अधिक ध्यान केंद्रित किया है। नियोजन की रेशिअल इक्विटी इम्पैक्ट असेसमेंट एंड इम्प्लीमेंटेशन गाइड क्रियान्वयन में निवासियों एवं सामुदायिक संगठनो के साथ काम कर फ्रंट लाइन समुदायों की पहचान करने के लिए रणनीतियों की पेशकश करती हैं और इक्विटी परिणामों की निगरानी करती हैं।

इस योजना से पहले, वेस्ट ओकलैंड को पहले ही ओकलैंड के फ्रंटलाइन समुदायों में से एक के रूप में नामित किया गया था। यह तीन फ्रीवेस, बंदरगाह, अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र, और एक जेट ईंधन से संचालित पीकर संयंत्र जो सभी प्रदुषण के उच्च स्तर में योगदान देते हैं, का घर हैं। इन के कारण अस्थमा, स्ट्रोक और कंजेस्टिव हार्ट फेलियर और संक्षिप्त जीवन काल की दरें उच्च होती हैं। इसे ईंधन स्विचिंग के साथ भवनों में गहन कार्बन कटौती के लिए प्राथमिकता दी जा रही है। इससे प्राकर्तिक गैस स्टोव और जगह एवं पानी गरम करने को इलेक्टिक इकाइयों द्वारा पलटा जा रहा है।

ईंधन स्विचिंग आतंरिक वायु गुणवत्ता में सुधार करती है और उत्सर्जन में कमी लती है और पूर्ण क्रियान्वन में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को 18 प्रतिशत तक कम कर सकती है। भवन ऊर्जा कार्यदक्षता में सुधार के परिणामस्वरूप और 12 प्रतिशत की कटौती होगी और यह ऊर्जा के बोझ को कम करने में मदद करेगी। यह एक प्रलेखित असमानता है जिसमें कम–आय वाले परिवार घरेलू आय का बड़ा भाग बिजली और प्राकृतिक गैस उपयोग बिल पर खर्च करते हैं।

> नागरिक विज्ञानं

वेस्ट ओकलैंड में शहर के प्रभावी होने का आंशिक कारण लम्बे समय से पर्यावरणीय न्याय समूहों के साथ साझेदारी है जिन्होंने स्वच्छ वायु पहुंचाई है और समुदाय का भरोसा प्राप्त किया है। वेस्ट ओकलैंड एनवायर्नमेंटल इंडीकेटर्स प्रोजेक्ट 2002 से इलाके में वायु की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए काम कर रहा है। सह–संस्थापक मार्गरेट गॉर्डोन याद करती हैं कि उनकी पहली लड़ाई बंदरगाह से आते जाते डीजल के धुंए को फेंकने वाले ट्रक्स को पुनर्निर्देषित करने की थी।

तब से, इंडीकेटर्स प्रोजेक्ट एनवायर्नमेंटल डिफेन्स फण्ड, गूगल और कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले के साथ नागरिक विज्ञानं में बहुत विशिष्ट स्थानों पर वायु गुणवत्ता की निगरानी करने के लिए साझेदारी कर रहा है। वे जानते थे कि सरकार की वायु निगरानी हॉटस्पॉट्स को नहीं पकड़ रही है। एक प्रोजेक्ट में निवासियों को नुक्कड़ पर ट्रकों की गिनती करने के लिए खड़ा किया। एक अन्य ने वरिष्ठ नागरिक गृहों के निवासियों को एयर मॉनिटर दिए और उन्हें दिन के विभिन्न समयों पर खिड़कियों को खोलकर और बंद कर के, डायरी लिखने को कहा। ऐसा उन्होंने प्रदूषण का स्तर कब उच्चतम था पता लगाने ले लिए किया था। एक और प्रोजेक्ट में इंटेल द्वारा निवासियों को उनके बैकपैक में रखे एयर मॉनिटर से डाटा डाउनलोड करने के लिए प्रशिक्षण दिया गया। प्रदुषण के विशिष्ट स्त्रोत की एक बार पहचान होने के बाद, वे सरकार के पास इस सबूत के साथ जा सकते है कि प्रदूषण की रोकथाम एवं सफाई के प्रयासों को और बढ़ाना होगा।

इन सभी प्रयासों के साथ, क्या वायु गुणवत्ता में सुधार हुआ है? सुश्री मार्गरेट गॉर्डोन कहती हैं कि उनकी खिड़कियां पहले काली होती थी, लेकिन अब वे गहरे स्लेटी रंग की हैं। स्पष्ट रूप से प्रदूषण उन्मूलन की और कार्यवाही होनी चाहिए और एक नवीन एक्विटेबल जलवायु कार्यवाही के लागू होने से यह एक तत्काल प्राथमिकता होनी चाहिए।

लेकिन एक नागरिक योजना पर्याप्त नहीं है। महीन स्तर पर निगरानी राज्य के कानून एवं वित्त पोषण से ही संभव है। कैलिफ़ोर्निया का असेंबली बिल (एबी) 617, जो 2017 में पारित हुआ था, वायु गुणवत्ता की निगरानी के लिए समुदाय केंद्रित दृष्टिकोण को समर्थन देने के लिए निधियन की बहुस्तरीय परतें प्रदान करता है। महामारी के कारण देश एवं स्थानीय सरकारों में धन की कमी के कारण नियोजन का एक अच्छा भाग क्रियान्वित नहीं होगा। अतः हमें एक नई ग्रीन डील के कुछ संस्करण को पोषित करने के लिए हमें अगले राष्ट्रीय प्रशासन की प्रतीक्षा करनी होगी।■

सभी पत्राचार जोआन फिट्जगेराल्ड को <jo.fitzgerald@neu.edu> पर प्रेषित करें।

> सामाजिक प्रस्थिति और कलंक के रूप में परोपकार

भारत में लॉकडाउन

महमुदुल हसन लास्कर, विज्ञान और प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, मेघालय, भारत द्वारा

बारपेटा, असम, भारत में भोजन वितरण, अप्रैल। श्रेयः सायंतन रॉय चौधरी

कोविड–19 के प्रसार को रोकने के लिये, भारत सरकार के द्वारा एक राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन लागू किया गया। जनसंख्या के पदानुक्रमित अलगाव और लॉकडाउन के असमान प्रभाव जैसी कठोर वास्तविकताओं ने ध्यान आकर्षित किया है। लॉकडाउन के कारण नौकरियों और वेतन की हानि ने गरीबी और अत्यधिक असमानताओं को और अधिक स्पष्ट कर दिया। अमीरों और मध्यम वर्गों के द्वारा गरीबों के प्रति दुर्व्यवहार सबसे ज्यादा कड़े हैं। लॉकडाउन की शुरूआत से ही अमीर लोंगों के द्वारा सोशल मीडिया पर गरीबों को राहत सामग्री पेश करते हुये स्वयं की तस्वीरें साझा करने की एक प्रचलित प्रवृति रही है। यह किस उददेश्य की पूर्ति करती है और इन अत्यधिक प्रचारित कार्यों के वास्तविक पुनर्वितरण के निहितार्थ क्या हैं?

> प्रत्युत्तर की अपर्याप्तता

अमीर और मध्यमवर्गीय वर्गों ने एक निश्चित मात्रा में सामग्री का वितरण किया जो कि इन गरीबों को एक या दो दिन तक पेट भर सकती है। अभिजात वर्ग यह क्यों नहीं समझने में सक्षम है कि एक या दो समय के भोजन की सामग्री प्रदान करना समाधान नहीं है? बडे पूंजीपति इस समस्या का समाधान उनके कॉरपोरेट सोशल रेस्पांसिबिलिटी (सीएसआर) फंड का उपयोग करके कर सकते हैं, परंतु ये बडे कॉरपोरेट समूह ने इस फंड का निवेश अधिक मुनाफा कमाने के लिये करते हैं। सरकार अकेले गरीबी को दूर नहीं कर सकती है जब तक कि पूंजीपति "अच्छी नौकरियों" को सुनिश्चित करते हुये इस प्रक्रिया में मदद का हाथ नहीं बढाते हैं, ना कि लोगों को सिर्फ उत्पादन के साधनों के रूप में कारखानों में काम पर रखते हैं।

एक बडी इमारत या बंगले से अमीर व्यक्ति के द्वारा आंगन में कतारों में खडे गरीबों को राहत सामग्री के छोटे पैकेट वितरित करने के सोशल मीडिया पर दृश्य को चित्रित करती हुई तस्वीरें सामाजिक पदानुक्रम की सामंती व्यवस्था का ध्यान दिलाती हैं। यह देखा गया कि पैकेट में मुख्यतः खाना पकाने का तेल (आधा से एक लीटर), चावल (दो से तीन किलोग्राम), बिस्किट (दो से तीन पैकेट), सूप (एक से दो पैकेट), प्याज (एक से दो किलोग्राम) और आलू (एक से दो किलोग्राम) होते हैं। यह आत्मावलोकन का एक विषय है कि क्या ये वस्तुऐं किसी के लिये दो महीने लंबें लॉकडाउन की अवधि में जीवित रहने के लिये पर्याप्त हैं। उनके बच्चों के स्वास्थ्य और

>>

शिक्षा का क्या होगा? जहाँ अमीर ई–लर्निंग या ऑनलाइन शिक्षा के लिये तकनीकी उपकरणों से लैस हैं, उनके लिये उन गरीब बच्चों की शिक्षा की पहुंच का प्रश्न भी नहीं उठता हैं जिनके पास ऐसे उपकरण नहीं हैं।

> दान के माध्यम से आत्म–प्रचार

लॉकडाउन आकांक्षी सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिये अपने छदम नेतृत्व का प्रदर्शन करने और राजनीतिक लाभ प्राप्त का एक अवसर बन गया है। गरीबों को राहत सामग्री देना एक स्टेटस सिंबल बन गया है जो कि सोशल मीडिया पर जानबूझकर चित्रित किया जा रहा है। ये छदम सामाजिक कार्यकर्ता स्वयं के लाभ के लिये आत्मछवि का प्रबंधन करते हैं। फेसबुक पर लोगों को सडक के किनारे और बाजारों में खाने के पैकेटों का वितरण करते हुये दिखाने वाली अजीब तस्वीरें सामने आई हैं। भूख दिखाना कोई गर्व की बात नहीं है बल्कि किसी के लिये भी शर्म की बात है, परंतु धनाढय लोग भोजन वितरण को एक पुरस्कार समारोह की तरह प्रदर्शित करते हैं। भोजन के पैकेटों के वितरण का सोशल मीडिया पर ऐसे महामण्डन किया गया है जैसे भूखे गरीब लोग अपना पूरा जीवन इन भोजन के पैकेटों के साथ व्यतीत करेंगें। एक घटना में, एक कैमरामैन सहित तीन लोग असम के गुवाहाटी शहर में सडक के किनारे सब्जी बेचने वालों को मास्क को वितरण करते हुये दिखायी दिये; पूरे दृष्य को कैमरामैन द्वारा एक अत्याधुनिक कैमरे से नाटकीय रूप से फिल्माया गया था। फंसे हुये प्रवासी मजदूर अचानक से शहरी मध्यम वर्ग और कुछ निश्चित श्रेणियों के लोगों की चिंता बन गये थे। लॉकडाउन के पहलेये तथाकथित सामाजिक कार्यकर्ता मुश्किल ही गरीब प्रवासी मजदूरों के लिये चिंतित थे क्योंकि वे अपने अन्य सोशल मीडिया रुझानों में व्यस्त थे।

> शर्म और तिरस्कार

ये अहंकारी धनाढ्य मध्यम वर्ग अपनी धर्मार्थ छवि का दिखावा गरीबों की गरिमा की कीमत पर कर रहें हैं। अमीरों द्वारा "सामाजिक सेवा" के द्वारा प्रदर्शित इस उदारता से गरीब केवल हताश हुये हैं। वे अपनी गरिमा, अपने और अपने बच्चों के जीवन के बारे में चिंतित हैं क्योंकि उनके जोखिम सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा सोशल मीडिया पर प्रदर्शित किये गये हैं। उनकी गरीबी उनके लिये एक कलंक बन गयी है क्योंकि उनकी स्थिति को हास्यापद तरीके से फिल्माया गया है। इलाके के संपन्न लोग एक अनुष्ठानिक तरीके से सामग्री प्रदान कर रहे हैं और अन्य कम संपन्न लोग उसे असहाय और अपराध की भावना से प्राप्त कर रहे हैं। अब इन गरीब लोगों को उनके संपन्न पडोसियों के द्वारा प्रदर्शित छदम अनुकंपा के दवाब के साथ रहना होगा। सामाजिक कार्य के "प्रदर्शन", जिसने उनकी गरीबी को एक असंवेदनशील तरीके से उजागर किया है, के कारण, गरीबों के बच्चों के लिये विद्यालय में अपने आत्मविश्वास को संभालना मुश्किल हो सकता है। किसी के लिये अपनी गरीबी को व्यक्त करना शर्मनाक कार्य नहीं है, परंतु इन सामाजिक कार्य के "अभिनेताओं" द्वारा गरीबों के साथ भिखारी की तरह व्यवहार करना अपमानजनक है। यह एक कारण है जिसकी वजह से समाज के गरीब और कमजोर वर्ग जीनोसेंट्रिज्म से या अपनी बजाय दूसरों की संस्कृति और आदतों के साथ पहचान स्थापित करते हैं। कृषि, जो कि कभी भारतीय अर्थव्यवस्था का एक आत्मनिर्भर और जीवंत क्षेत्र हुआ करता था, में गिरावट के कारण आत्मसम्मान का पहले से ही ह्रास हो चुका है। औद्योगिकीकरण ने शारीरिक मजदूरी करने वालों श्रमिकों के लिये एक श्रम बाजार को निर्मित किया है, जिससे कभी आत्मनिर्भर ग्रामीण लोग, अब शहरों में प्रवासी हैं और शहरी गरीबों का एक मुख्य हिस्सा हैं।

> वास्तविक समाधान

प्रवासियों का मुद्दा छद्म बौद्धिकतावाद और सोशल मीडिया पर सामाजिक सक्रियता का एक विषय बन गया है। परंतु उनकी समस्याओं के वास्तविक समाधान अलग है, और इसमें आत्मनिर्भर कृषि पर लौटना, आजीविका और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा के लिये पर्यावरणवाद, और देशज लघु और कुटीर उद्योगों को बढावा देने जैसे दृष्टिकोण शामिल हैं। ये भारत में प्रवासियों के मुददों और गरीबी के वास्तविक समाधानों की पहलकर सकते हैं परंतु दुर्भाग्यवश सेमीनार (अब वेबिनार), संगोष्ठियां और सोशल मीडिया पोस्ट बिना किसी प्रभावी संभाषण के सिर्फ सतही बहस और चर्चायें पैदा करते हैं।

राहत और भोजन वितरण सोशल मीडिया पर एक फोटोग्राफी प्रतियोगिता में बदल गया है जो अंततः जीवन में गरीबों की गरिमा को प्रभावित करता है। यह कोई दीर्घकालिक समाधान नही देता है। यदि संपन्न गरीबों की मदद करने के बारे में गंभीर हैं, तो उन्हें इसे बिना एक स्टेटस और गर्व के मामले के रूप में प्रदर्शित किये बिना, पूंजी के पुनर्वितरण के रूप में करना चाहिये। ■

सभी पत्राचार महमुदुल हसन लास्कर को <rhasanlaskaramu@gmail.com> पर प्रेषित करें।

> देखभाल की कमी?

देखभाल प्रवास और राजनीतिक जनसांख्यिकी

अतिला मेलेघ, कोर्विनस यूनिवर्सिटी ऑफ बुडापेस्ट, हंगरी द्वारा

सन् 2010 के दशक में मानवता एक विशेष वैश्विक सामाजिक स्थिति में पहुंच गई है। 1980 के दशक के बाद से ही वृद्धावस्था, पुनर्वितरण में बिना वृद्धि के चल रहे बाजारीकरण, और कृषकता की मृत्यु के बीच में एक अधिक अद्वितीय परस्पर क्रिया रही है। इन कारकों और इनकी ऐतिहासिक गतिशीलता, देखभाल की कमी और देखभाल प्रवास उद्योग में एक संबंधित नाटकीय वृद्धि का नेतृत्व किया है। ये घटनाक्रम प्रवासी देखभालकर्ताओं को एक बहुत मुश्किल स्थिति में डालते हैं, मुख्यतः इस कोविड–19 महामारी के समय ने स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच को विश्वस्तर पर और भी अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। वैश्विक जनसंख्या के विशाल भाग – ना सिर्फ गरीब देशों में – अधिकाधिक प्रवासी श्रम पर आधारित विभिन्न देखभाल व्यवस्थाओं की दया पर हैं। इसी बीच, प्रवासी श्रमिक अपने कार्य की बढती मांग, अपने रोजगार की बढती अस्थिरता, प्रवासियों के प्रति बढते बैर, और महामारी की वजह से भी बढती जांच–पडताल के बीच उहापोह की स्थिति में फंस गये। हम एक ऐसे बिंदु पर पहुंच गये हैं जहां बीमार और बुजुर्गों की देखभाल अधिक प्रतिस्पर्धात्मक और बहुत नाजुक बनती जा रही है।

> बढती घरेलू और स्वास्थ्य सेवा प्रवास

हमारे पास घरेलू और स्वास्थ्य सेवा श्रमिकों के लिये व्यवस्थित वैश्विक आंकडों की कमी है। 2015 के लिये, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) ने अनुमान लगाया कि यहां लगभग 67.1 मिलियन घरेलू श्रमिक थे, जिनमें से 11.5 मिलियन प्रवासी थे और लगभग तीन–चौथाई महिलायें थी। इसी बीच स्वास्थ्य सेवा प्रवास भी बहुत बढ गया है। 2013 के लिये विश्व स्वास्थ्य संगठन (डबल्यूएचओ) के एक अनुमान ने 17.4 मिलियन स्वास्थ्य सेवा श्रमिकों की कमी बतायी और मांग में एक नाटकीय वृद्धि का अनुमान लगाया जो सिर्फ बढते हुये प्रवास से पूरी की जा सकती है। अपेक्षाकृत अमीर ओईसीडी देशों (संयुक्त राज्य अमेरिका को छोडकर) ने 2007 और 2016 के मध्य विदेशी–प्रशिक्षित नर्सों के भंडार में 80 प्रतिशत तक और ऐसे ही चिकित्सकों की संख्या में कम से कम 45 प्रतिशत तक वृद्धि की है। 2016 तक, उपरोक्त देशों में विदेशी–प्रशिक्षित चिकित्सकों की संख्या लगभग आधा मिलियन पहुंच गयी है, जबकि विदेशी–प्रशिक्षित नर्सों की संख्या 300000 से ऊपर है। कुछ देशों में विदेश में जन्में चिकित्सकों (जिनमें से कई का आवागमन कोविड–19 महामारी के दौरान स्थानीय और राष्ट्रीय लॉकडाउन के कारण अवरूद्ध था) की दर कम से कम 10 प्रतिशत बढकर, कुल चिकित्सकों की 40 या 50 प्रतिशत तक पहुंच गयी हैं।

> वृद्धावस्था, बढती स्वास्थ्य लागतें, और अपरिवर्तित पुनर्वितरण

तेजी से बढती वृद्ध जनसंख्या और बुजुर्ग आश्रितों की देखभाल ने श्रम उत्पादकता और वास्तविक देखभाल आवश्यकता दोनों के संदर्भ में युवा जनसंख्या पर महत्वपूर्ण बोझ डाला है। विशेष रूप से यह राज्य पुनर्वितरण की बढती वैश्विक स्थिरता के मामले में ऐसा है, जैसा कि जोसेफ बोरोज (2016) ने कार्य–संबंधी सामाजिक योगदान पर अपने अध्ययन में उल्लेख किया है। इसके अलावा, सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में कर राजस्व (पुनर्वितरण दरों) का हिस्सा भी वैश्विक तौर पर ठहर गया है। विश्व बैंक के आंकडों के अनुसार यह 14 प्रतिशत के लगभग औसत के आस पास झूल रहा है। उसी समय, प्रति व्यक्ति स्वास्थ्य व्यय कम से कम 2000 के दशक से जीडीपी प्रति व्यक्ति वृद्धि (ग्राफ 1 और 2 देखें) की तुलना में अधिक दर से बढ रहा है। वैश्विक तौर पर, इसी अवधि में वृद्धावस्था निर्भरता 9.5 प्रतिशत से 13.2 प्रतिशत तक बढ गयी (ग्राफ 3 देखें)। इसमें बहुत युवा जनसंख्या वाले देश शामिल हैं जो कि वृद्ध यूरोप के उलट हैं।

2010 तक, जीडीपी प्रति व्यक्ति में वृद्धि की तुलना में दुनिया की जनसंख्या धीमी गति से वृद्ध हुई है, जिसका अर्थ है कि, पुनर्वितरण दरों में स्थिरता के बावजूद, वृद्धावस्था देखभाल की सार्वजनिक और बाजार कीमतों के लिये उपलब्ध संसाधनों में विस्तार हो रहा था। 2010 के बाद से, हालांकि, वृद्धावस्था निर्भरता अनुपात में वृद्धि अर्थव्यवस्था में वृद्धि की तुलना में तेज रही है। इसका अर्थ है कि प्रति व्यक्ति स्वास्थ्य व्यय के लिये आवश्यक आय अतिरिक्त निजी

ग्राफ 1

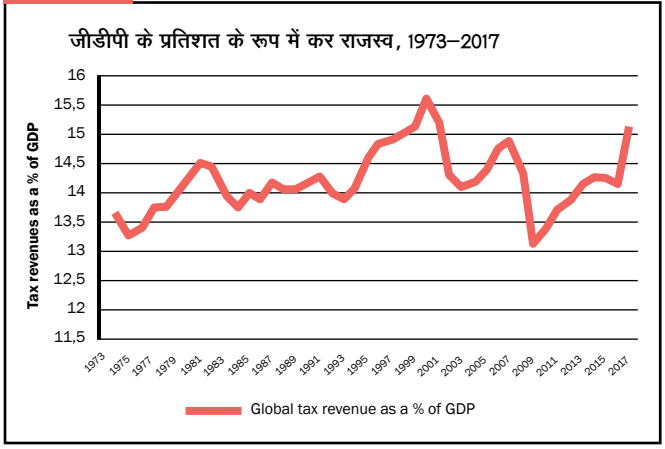

स्त्रोत : http://datatopics.worldbank.org/world-development-indicators/

>>

ग्राफ 2

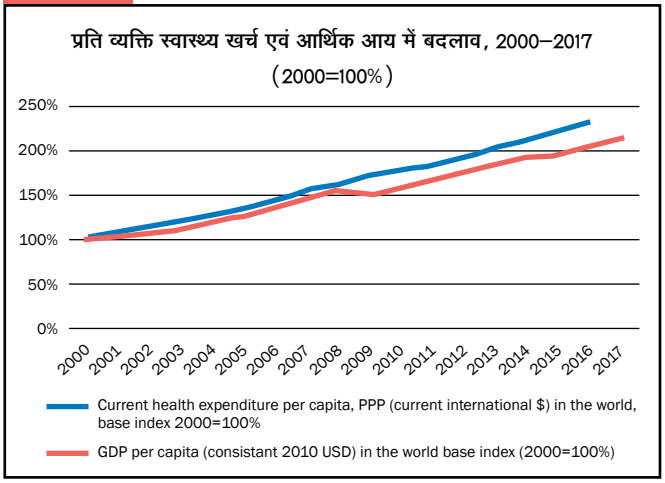

स्त्रोत : http://datatopics.worldbank.org/world-development-indicators/

स्त्रोंतों से आ सकती है (स्वयं की आय का उपयोग करते हुये बाजार में ऐसी सेवाओं का बढता हुआ हिस्सा खरीदना) और/या स्वास्थ्य संबंधी सार्वजनिक खर्चों का अनुपात अन्य सार्वजनिक लक्ष्यों की कीमत पर बढ रहा है। बदले में, यह पुनर्गठन, आवश्यक रूप से सामाजिक और स्वास्थ्य वस्तुओं के लिये बाजार और कल्याण प्रतिस्पर्धा में वृद्धि की ओर जाता है। इसके कारण देखभाल प्रवासी, जो स्वयं के लिये सामाजिक सुरक्षा की तलाश कर रहे होते हैं, के लिये यह और भी अधिक मुश्किल हो जाता है।

समस्याओं का यह समूह प्रवास को आगे कई तरीकों से जटिल बना सकता है। प्रवासी अपने वेतन और प्रेषण से कल्याणकारी सेवायें खरीदने की चाह सकते हैं या प्रवास गंतव्य देशों की कल्याणकारी व्यवस्थाओं में प्रवेश कर सकते हैं। अच्छे से स्थापित कल्याणकारी व्यवस्थाओं वाले अन्यथा बैरी राज्य प्रवासियों को एक ही समय में दंडित कर सकते हैं और वृद्धावस्था, सामाजिक और स्वास्थ्य आवश्यकतायें, और सार्वजनिक खर्च के बीच कराधान संतुलन को बेहतर बनाने के लिये उनके सामाजिक योगदान की मांग करते हैं।

ग्राफ 3

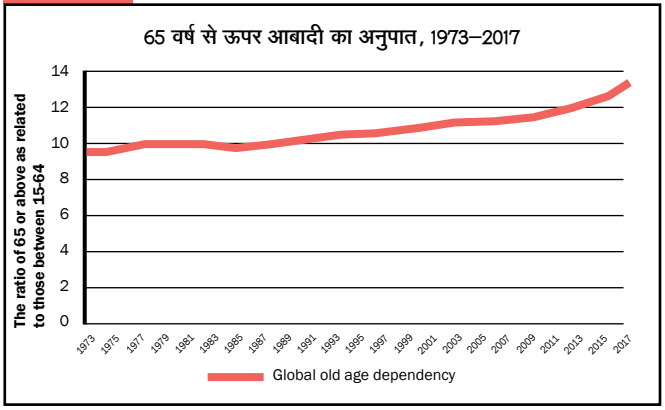

स्त्रोत : http://datatopics.worldbank.org/world-development-indicators/

इसके अलावा, इस सामाजिक वातावरण में, न केवल स्थानीय समूहों के मध्य और स्थानीय समूहों और प्रवासियों के मध्य, बल्कि स्वयं उन प्रवासी समूहों के मध्य भी प्रतिस्पर्धा के स्पष्ट संकेत हैं, जो कि आने वाले शरणार्थियों की "महंगी" सुरक्षा को खारिज करने वाले पूर्वी यूरोपियन देखभाल श्रमिकों के साक्षात्कार से प्रमाणित होता हैं। कोविड–19 महामारी ने केवल इन तनावों को बढाया है और हमने अभी वर्तमान आर्थिक संकट का अंत नहीं देखा है।

> वैश्विक देखभाल प्रतिस्पर्धा और राज्य संरक्षण

इस तरह के विरोधाभास राज्य पुनर्वितरण के स्तर और वृद्धावस्था दरों में बदलाव के कारण, जिसे हॉब्सबॉम, द ऐज ऑफ एक्सट्रीम्स में "कृषकता की मृत्यु" कहते हैं, के बाद विशेष रूप से तीव्र हो सकते हैं। बींसवी सदी के मध्य में कृषि रोजगार में गिरावट तीव्र गति से चलती रही और 2018 तक विश्व स्तर पर 30 प्रतिशत तक नीचे चली गई; इतिहास में पहली बार शहरी जनसंख्या की तुलना में ग्रामीण जनसंख्या अल्पसंख्यक बन गयी है। इसका अर्थ यह है कि वृद्धावस्था से जुडे देखभाल के बोझ ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण ग्रामीण–परिवार आधारित व्यवस्थाओं के विपरीत बाजार और राज्य पुनर्वितरण व्यवस्था में अधिकाधिक प्रसारित होने चाहिये। इसका अर्थ पारिवारिक सेवाओं पर आधारित वृद्धावस्था देखभाल पर घटता हुआ भार है। गरीब देशों में भी, स्थानीय या प्रवासी वृद्धावस्था–देखभालकर्ताओं के द्वारा प्रस्तुत के साथ, राज्य और बाजार स्वास्थ्य और सामाजिक सेवाओं को खरीदने की आवश्यकता के विपरीत परिवार के अंदर वृद्धों के लिए भोजन और वस्तुओं के प्रत्यक्ष प्रावधान कम हो गए हैं। यह बदलाव मानव इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण हालिया परिवर्तनों में से एक है और वैश्वीकरण के युग में एक निर्णायक क्षण बन गया है (ग्राफ 4)।

ग्राफ 4

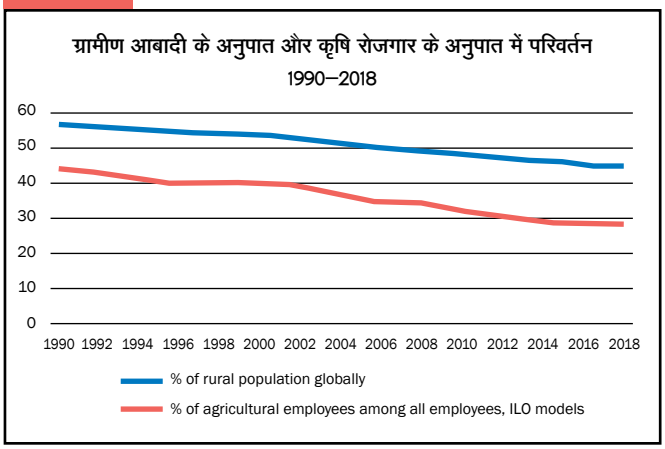

स्त्रोत : http://datatopics.worldbank.org/world-development-indicators/

इसका अर्थ है कि बाजारीकरण आगे बाजारीकरण और राज्य संरक्षण के लिये संबंधित जवाबी–मांग की ओर अग्रेषित होगा, जो सत्तावादी राष्ट्रवादों का एक आदर्श मिश्रण है। अतः, हम निष्कर्श निकाल सकते हैं कि वर्तमान पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था में देखभाल की कमी के आसपास विरोधाभास परिवर्तन का एक स्त्रोत हो सकते हैं। इस प्रकार, कोविड के दौरान और बाद में, राजनीतिक जनसांख्यिकी बहस बढेगी जिसमें सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा और आर्थिक व्यवस्था में एक आमूलचूल परिवर्तन को विरोधाभासी बाजारीकरण के विकल्पों के रूप में देखा जायेगा। और यह ठीक ही है। ■

सभी पत्राचार अतिला मेलेघ को
<attila.melegh@uni-corvinus.hu> पर प्रेषित करें।

> क्या कोविड–19 वैश्वीकरण के अंत तक ले जा सकता है?

इलियाना ओलीव और **मैनुअल ग्रेसिया,** इलकैनों रॉयल इंस्टीटयूट एंड यूनिवर्सिडाड कंपल्यूटेंस दे मैड्रिड, स्पेन द्वारा

वर्तमान वैश्वीकरण प्रक्रिया, जो कि 1970 के दशक की है, में वृद्धि, संकुचन, और उत्परिवर्तन के चरण सम्मिलित हैं। इनमें से कई वैश्विक आर्थिक और भूराजनीतिक व्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन के अनुरूप हैं, जिसमें एशिया में उभरती शक्तियों के उदय और अटलांटिक से प्रशांत महासागर में वैश्विक गतिविधि के परिकेंद्र का संबंद्ध परिवर्तन सम्मिलित है।

2000 के दशक के अंत में और 2010 के दशक के प्रारम्भ में महामंदी की इन परिवर्तनों के त्वरण और समेकितकरण में परिणिती हुई, एक प्रवृति जो इलकैनो ग्लोबल प्रेजेंस इंडेक्स में परिलक्षित होती है। वर्तमान स्वास्थ्य, आर्थिक, राजनीतिक, और सामाजिक संकट भी अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और स्वयं वैश्वीकरण की प्रक्रिया पर अपनी छाप भी छोडेगा।

जहाँ अभी पूरे प्रभाव की भविष्यवाणी करना बहुत जल्दबाजी होगी, हम उत्पादन और उपभोग (और इस प्रकार व्यापार) में व्यवधानों के रूप में संकट के कुछ परिणामों को पहले से ही देख रहें हैं। लोगों के अंतर्राष्ट्रीय प्रवाह में नाटकीय कमी से कुछ प्रभावों का अनुमान लगाना भी संभव है।

> कोविड महामारी के पहले ही दुनिया अवैश्वीकृत हो रही थी

बींसवी शताब्दी के अंतिम तीन दशकों में दुनियाभर में आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के लागू करने के परिणामस्वरूप अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक आदानप्रदानों में तेजी से वृद्धि हुई। आर्थिक वैश्वीकरण की विभिन्न लहरें हमेशा सीमापार लोगों के आवागमन (सैन्य टुकडी, प्रवासी, पर्यटकों, छात्रों, अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में खेलों के खिलाडियों और अंतर्राष्ट्रीय विकास कार्यकर्ताओं) और विचारों (सूचना, संस्कृति, विज्ञान, तकनीक और शिक्षा का आदान प्रदान) सहित विभिन्न रूपों के अंतर्राष्ट्रीयकरण (सैन्य या नरम) के साथ रही। जहाँ वैश्वीकरण की अकादमिक अवधारणा ने हमेशा इन अन्य गैर–आर्थिक आयामों को पहचाना है, अंतर्राष्ट्रीयकरण की प्रक्रिया के विश्लेषणों ने आर्थिक आयाम पर ही ध्यान केंद्रित किया है।

आर्थिक आयाम पर यह फोकस इस भविष्यवाणी के लिये आंशिक रूप से जिम्मेदार है कि वैश्वीकरण 2008 के आर्थिक संकट और बाद में आयी महामंदी के दौरान धीमा हो जायेगा, समाप्त हो जायेगा या "धर्मनिरपेक्ष जडता" के काल में प्रवेश कर जायेगा।

और फिर भी जहाँ एक मंदी थी – और यहां तक कि कुछ निश्चित चरों और कुछ निश्चित वर्षों में एक प्रत्यवर्तन – विशिष्ट व्यापार प्रवाहों और विदेशी प्रत्यक्ष निवेशों के लिये आर्थिक अंतर्राष्ट्रीयकरण में, इल्कानो ग्लोबल प्रजेंस इंडेक्स से पता चलता है कि काफी धीमा होने और अंतर्राष्ट्रीयकरण के नरम रूपों की ओर रूपांतरित होने के बावजूद, वैश्वीकरण वापस उलट नहीं हुआ।

वास्तव में, वैश्विक उपस्थिति का अतिरिक्त मूल्य (सभी 130 देशों, चरों और आयामों सहित) विश्व आदानप्रदानों की मात्रा को दर्शाता है, और इसीलिये, वैश्वीकरण के एक प्रतिनिधि के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है (चित्र 1)।

इस इंडेक्स पर आधारित, हम वैश्वीकरण के चरणों का अवलोकन कर सकते हैं: (अ) 1990 और 1995 के बीच, यूरोप के भूराजनीतिक पुनर्रचना के संयोग के साथ, कुल वैश्विक उपस्थिति –0.6 प्रतिशत के वार्षिक औसत से गिर गयी। (ब) इसके बाद 1995 और 2011 के मध्य, 57 प्रतिशत की कुल बढत के साथ सतत वैश्वीकरण का दूसरा चरण आया। (स) महान मंदी के बाद के चरण में, मध्यम वृद्धि और गिरावट के साथ, 1 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि का

चित्र 1: एलकानो ग्लोबल प्रजेंस इंडेक्स

स्त्रोतः एलकानो रॉयल इंस्टिट्यूट , एलकानो ग्लोबल प्रजेंस इंडेक्स

परिणाम आया। (द) इसके बाद 5 प्रतिशत की तीव्र वृद्धि के साथ अगला चरण आया (इसलिये संकट–पूर्व समय की संख्या तक वापिस आ गया)। (ई) हाल ही में, इसमें –2.6 प्रतिशत की गिरावट आयी, जो कि 30– वर्ष–समय श्रंखला में सबसे बडी वार्षिक गिरावट है (चित्र 2)।

विभिन्न चरों और आयामों (आर्थिक सैन्य और नरम) ने, चरण के आधार पर, वैश्वीकरण की गति में विभिन्न तरीकों से योगदान भी दिया है। 1990 और 2005 के मध्य, वैश्वीकरण का मुख्य आधार आर्थिक आयाम था। इस अवधि के दौरान नरम आयाम ने एक सकारात्मक यद्यपि साधारण योगदान दिया, जबकि सैन्य ने एक

>>

चित्र 2: ग्लोबल प्रजेंस एडेड वैल्यू
(सभी 130 देशों के लिए, 1990–2019, इंडेक्स वैल्यू पॉइंट्स में)

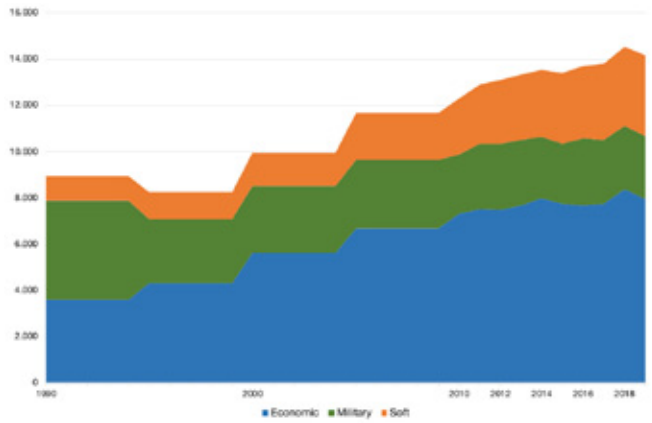

स्रोतः एलकानो रॉयल इंस्टिट्यूट, अलकानो ग्लोबल प्रेसेंस इंडेक्स

निश्चित वापसी दिखायी। हालांकि, ये रूझान 2000 के दशक में काफी बदल गये, जबनरम आयाम ने वैश्वीकरण का संचालन करना शुरू किया। पिछले कुछ वर्षों में, कुल वैश्विक उपस्थिति में वृद्धि और गिरावट दोनों, मुख्यतः आर्थिक आयाम के प्रदर्शन के कारण है।

> वैश्विक आदानप्रदानों पर कोविड–19 का प्रभाव

यहां इस बात पर जोर देना महत्वपूर्ण है कि इल्कानो ग्लोबल प्रजेंस इंडेक्स संरचनात्मक रूझानों को दिखाता है, मतलब यह कि क्षणिक वित्तिय अस्थिरता या राजनीतिक परिवर्तन इसके परिणामों में कम ही परिलक्षित होते हैं। इंडेक्स के द्वारा आयामों और चरों में परिवर्तन दिखाये जाने के पहले वहां 2 सालों का अंतराल भी है। 2008–09 के संकट के प्रभाव 2011 तक इंडेक्स में परिलक्षित नहीं हुए और कोविड–19 महामारी के प्रभावों की 2021 या 2022 तक इंडेक्स के मूल्यों में दर्ज होने की उम्मीद नहीं है।

यद्यपि महामारी के विभिन्न मोर्चों लघु–, मध्यम–, और दीर्घकालिक प्रभावों की विभिन्न लेखकों और संस्थाओं द्वारा पहले से ही अनुमान और भविष्यवाणी की जा रही है, परंतु वैश्वीकरण के संदर्भ में, तस्वीर अभी भी अधूरी ही है। इस स्वास्थ्य संकट (और वैश्विक स्तर पर देशों द्वारा अपनाये गये राजनीतिक प्रतिक्रियाओं) के भविष्य में प्रभाव का पता लगाने का एक तरीका विभिन्न परिदृश्यों का अवलोकन करना है, जो इल्कानो ग्लोबल प्रजेंस इंडेक्स के अतिरिक्त मूल्य पर महान मंदी के असर पर आधारित हो।

> परिदृश्य अः 2008 जैसा संकट

यदि वर्तमान स्वास्थ्य आपातकाल और इसके आर्थिक, राजनीतिक, और सामाजिक परिणाम पूर्व संकट के समान पैमाने पर हैं, तो हम इल्कानो ग्लोबल प्रजेंस इंडेक्स के कुल मूल्य में, सभी चरों और आयामों के लिये, 2010–15 की अवधि के समान परिवर्तन की उम्मीद करेंगें।

> परिदृश्य बः 2008 से बदतर संकट

कुछ विश्लेषकों का तर्क है कि आर्थिक, राजनीतिक, और सामाजिक परिणाम 2008 के संकट से अधिक विनाशकारी और गहरें होंगें। ऐसे परिदृश्य में, इंडेक्स के विभिन्न घटकों के आंकडे, संभवतः 2022 से, 2010–18 की अवधि के दौरान देखे गये प्रत्येक सूचकांक में सबसे खराब गिरावट दर्ज करेंगें।

> परिदृश्य सः 2008 से अलग संकट

अंत में, इस संकट की विशिष्ट विशेषतायें और 2008 के सन्दर्भ में इसके अंतरों का अर्थ हो सकता है कि विभिन्न चर अलग तरह से व्यवहार कर रहे हैं। भविष्यवाणियां और अनुमान,लोगों के सीमापर आवागमन (प्रभावित करने वाले चर जैसे सैन्य तैनाती, शिक्षा, प्रवासन या पर्यटन) में नाटकीय कमी के परिणामस्वरूप, आर्थिक चरों पर महान मंदी के समान और नरम चरों पर एक मजबूत प्रभाव की भविष्यवाणी करता है।

इस परिदृश्य में, 16 चरों (जिनका तर्क यहां सविस्तार दिया है) में प्रत्येक के अपेक्षित प्रदर्शन तीसरे परिदृश्य तक ले जाते हैं, जहां वर्तमान संकट के वैश्वीकरण पर प्रभाव 2008 के संकट से भिन्न हैं (चित्र 3)।

तीन परिदृश्यों में से सिर्फ एक (परिदृश्य ब) का परिणाम, 2019 के मूल्यों के संदर्भ में सभी 130 देशों की कुल वैश्विक उपस्थिति में 1 प्रतिशत की गिरावट के साथ, प्रभावी अवैश्वीकरण होगा। यह सभी आयामों, विशेष रूप से आर्थिक (समग्र स्थिति में) और सैन्य (सापेक्ष स्थिति में), को प्रभावित करेगा।

हालांकि, यदि परिवर्तनकारी प्रभाव पिछले संकट के समान हैं (परिदृश्य अ), इसके साथ नरम आयाम में संचयी वृद्धि और, कुछ सीमा तक आर्थिक आयाम में, के साथ हम वैश्वीकरण (+1.7 प्रतिशत कुल वैश्विक उपस्थिति) की प्रक्रिया में निरंतरता की उम्मीद कर सकते हैं।

कोविड–19 के पश्चात् वैश्वीकरण के तीन परिदृश्य

	ScenarioA Crisis similar to 2008 *Average rate (2010-15)*	**Scenario B** Crisis worse than 2008 *Larger reduction (2010-18)*	**Scenario C** Different crisis to 2008
Energy	6.8	-36.2	-11.1
Primary goods	4.3	-7.5	-1.1
Manufactures	2.6	-3.4	-0.7
Services	1.7	-0.7	-0.7
Investments	-0.3	-8.9	-0.3
Troops	-4.0	-10.2	5.7
Military equipment	3.7	-2.0	-1.0
Migration	1.4	-1.0	-1.0
Tourism	3.7	2.0	2.0
Sports	-0.8	-1.7	-1.7
Culture	7.3	-8.9	-1.8
Information	16.9	-1.4	16.9
Technology	4.2	1.7	4.2
Science	5.0	3.4	5.0
Education	5.2	0.1	0.1
Development cooperation	2.6	-4.8	4.1

स्त्रोतः लेखक, अलकानो ग्लोबल प्रेसेंस इंडेक्स पर आधारित

>>

चित्र 4: औसत वैश्विक उपस्थिति, **A, B** एवं **C** परिदृश्य के अंतर्गत अनुमान
(2019 के सन्दर्भ में इंडेक्स के मूल्य में परिवर्तन)

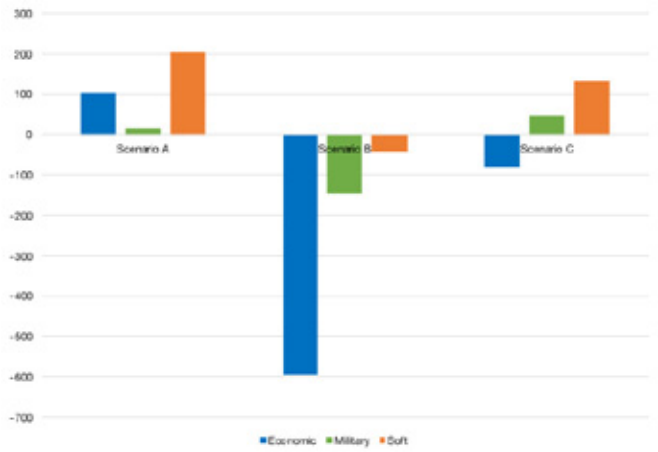

स्त्रोतः लेखक, अलकानो ग्लोबल प्रेसेंस इंडेक्स पर आधारित

चित्र 5: औसत वैश्विक उपस्थिति, **A, B** एवं **C** परिदृश्य के अंतर्गत अनुमान
(2019 के सन्दर्भ में इंडेक्स के परिवर्तन)

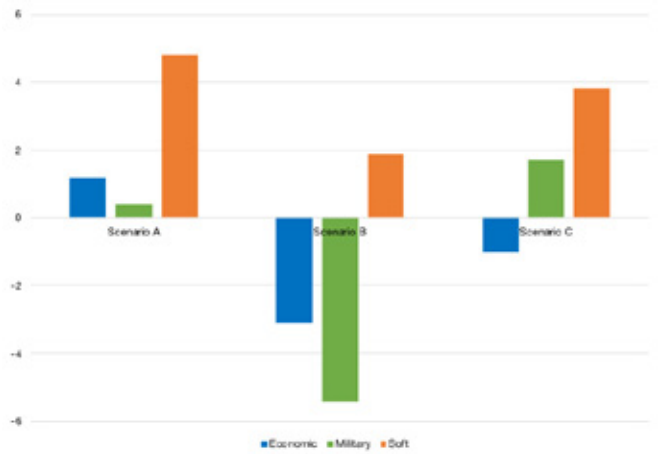

स्त्रोतः लेखक, अलकानो ग्लोबल प्रेसेंस इंडेक्स पर आधारित

अंत में, पिछले संकट के विभिन्न परिवर्तनकारी प्रभावों के आधार पर परिदृश्य वैश्वीकरण में लगभग एक ठहराव देखेगा, कुल वैश्विक उपस्थिति 0.7 प्रतिशत की बढत के साथ। यह आर्थिक आयाम में एक मामूली गिरावट के साथ एक अधिक गतिशील नरम आयाम का परिणाम होगा (चित्र 4 और 5)।

संक्षेप में, 2000 के दशक के अंत तक संकट के समान, वर्तमान संकट का अंतर्राष्ट्रीय संबंधों पर एक प्रभाव पडेगा। हम संरचनात्मक परिवर्तनों में एक तेजी की उम्मीद कर सकते हैं जो हम वैश्वीकरण की प्रक्रिया में पहले से ही देख रहें हैं। ■

सभी पत्राचार इलियाना ओलीव को <iolivie@rielcano.org> पर
और मैनुअल ग्रेसिया को <mgracia@rielcano.org> पर प्रेषित करें।

> कोविड–19 का सामना करना:
मध्य यूरोप में लिव–इन देखभाल

ब्रिजिट ऑलेनबेकर, जोहन्स केपलर विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रिया और अर्थव्यवस्था और समाज (आरसी02), गरीबी, समाज कल्याण, और सामाजिक नीति (आरसी 19), कार्य का समाजशस्त्र (आरसी 30), और महिलाएं, लिंग और समाज (आरसी 32) पर आईएसए शोध समिति के सदस्य; **पेट्रा एज्जेडाइन,** चार्ल्स विश्वविद्यालय, चेक गणराज्य; **डोरा गेब्रियल,** हंगरियन डेमोग्राफिक रिसर्च इंस्टिट्यूट, हंगरी; **माइकेल लीबफिंगर,** जोहन्स केपलर विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रिया और आरसी 19 व आरसी 30 आईएसए शोध समिति के सदस्य; **किंगा मिलानकोविक्स,** एचईकेएटीई (HEKATE) कॉन्शियस एजिंग फाउंडेशन, हंगरी; और **वेरोनिका प्रिलर,** जोहानेस केपलर विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रिया और आईएसए शोध समिति आरसी 19 व आरसी 32 के सदस्य द्वारा

यात्रियों के लिए विज्ञापित मास्क ताकि उन्हें हंगरी–ऑस्ट्रिया सीमा पर श्रमिकों के रूप में तुरंत पहचाना जा सकें।

मध्य यूरोप में, लिव–इन देखभाल वृद्ध देखभाल क्षेत्रों का एक अधिकाधिक महत्वपूर्ण स्तंभ है। देखभाल श्रमिक, प्रमुखतः महिला प्रवासी, देखभाल प्राप्तकर्ताओं के घर में रहते और काम करते हैं। उनकी जिम्मेदारियां घर की देखभाल से लेकर चिकित्सा कार्यों तक होती हैं। लिव–इन देखभाल का विनिमयन एक देश से दूसरे देश तक भिन्न भिन्न होता है, जिसमें अनिश्चित कार्य करने की स्थितियां एक आम अवयव के रूप में है। मध्य यूरोपीय लिव–इन देखभाल चक्रीय प्रवास पर आधारित है और अक्सर दलाल गरीब देशों से देखभाल श्रमिकों की भर्ती करते हैं जिन्हें विदेश में (कोई भी) नौकरियॉ स्वीकार करने के लिये धकेल दिया जाता है। इस मॉडल की एक पूर्व–शर्त यूरोपीय संघ देशों में और उसके बाहर श्रमिकों की कमोबेश मुक्त आवाजाही है, जिसे कोविड–19 महामारी के दौरान, बंद सीमाओं के कारण अब संभव नहीं माना जा सकता था। यह लेख ऑस्ट्रिया, चेक गणराज्य, और हंगरी में लिव–इन देखभाल का विश्लेषण, अपने अपने देखभाल मॉडलों के बारे में बताकर और यह दर्शा कर कि महामारी ने लिव–इन देखभाल को कैसे प्रभावित किया है, के द्वारा करता है।

> ऑस्ट्रिया, चेक गणराज्य, और हंगरी में लिव–इन देखभाल

ऑस्ट्रिया में, लिव–इन देखभाल एक पेशे के रूप में वैद्य है। आमतौर पर, प्रत्येक घर में दो देखभालकर्ता दो से चार सप्ताह तक विकल्पेन काम करते हैं। देखभाल श्रमिक स्व–उद्यमी होते हैं, जो मुख्यतः देखभाल प्राप्तकर्ताओं के लिये लचीलेपन को दर्शाता है, जबकि देखभालकर्ता न्यूनतम वेतन, सवैतनिक अवकाश, या रुग्णता अवकाश के लिये पात्र नहीं होते हैं। ऑस्ट्रिया के विपरीत, चेक गणराज्य और हंगरी दोनों देखभालकर्ताओं को भेजते और मंगाते भी है। बाहर जाने वाले चेक और हंगरीयन देखभालकर्ता मुख्य रूप से जर्मनभाषी देशों – ऑस्ट्रिया और जर्मनी जाते हैं। चेक गणराज्य के लिये, जहां निजी घरों में प्रवासी देखभाल कार्य काफी नयी प्रघटना है, यूक्रेन एक महत्वपूर्ण भेजने वाला देश है। चेक गणराज्य में लिव–इन देखभाल कार्य–क्षेत्र अभी छोटा है और प्रवासी श्रमिक (गैर–यूरोपीय संघ) का निवास परमिट प्राप्त करना वैद्य रोजगार अनुबंध पर निर्भर करता है। हंगरी मुख्यत यूक्रेन और रोमानिया से जातीय हंगेरियन देखभालकर्ता प्राप्त करता है, जो भाषायी और सांस्कृतिक निकटता के कारण, अधिक वेतन के लिये पश्चिमी यूरोप की ओर आवश्यक रूप से रूख नहीं करते हैं। हंगरी में अधिकतर प्रवासी लिव–इन देखभालकर्ता अनौपचारिक तौर पर कार्य करते हैं परंतु यहां पर कुछ औपचारिक रोजगार के अवसर भी हैं।

> कोविड–19 महामारी के द्वारा लायी गयी चुनौतियां

जैसे ही कोविड–19 महामारी फैली, इसने सीमाओं को तुरंत बंद कर दिया, न केवल बल्कि मध्य यूरोप में भी, और कुछ समय के लिये, इसने सीमापार चक्रीय प्रवास भी बंद कर दिया। ऑस्ट्रिया में, महामारी ने लिव–इन देखभाल को सर्वव्यापी मीडिया कवरेज में और विभिन्न कार्यकताओं के एजेंडा पर ला दिया जो विकल्पों की तलाश के बजाय परिवर्तन के बिना बने रहने के लिये प्रयासरत थे। जर्मन, ऑस्ट्रियन, और चेक सरकारों ने "केयर कॉरिडोर्स" को सफलतापूर्वक संभाला जबकि हंगेरियन देखभालकर्ता ऑस्ट्रिया में प्रवेश करने के लिये समान रूप से स्वतंत्र थे। देखभाल श्रमिकों ने सोचना शुरू किया कि क्या उन्हें घर पर रूकना चाहिये, जिसका अर्थ उनकी आय का नुकसान था, या प्राप्तकर्ता देशों में में रहना/जाना चाहिए। ऑस्ट्रिया में, कई देखभालकर्ताओं ने अपनी पारियां बढायी, जिसे संघीय सरकार ने एक–मुश्त 500 यूरो कर–मुक्त बोनस के द्वारा प्रोत्साहित किया। मार्च के अंत और मई के मध्य, तीन चार्टर्ड विमानों में बुल्गारिया, क्रोएशिया, और रोमानिया से देखभाल श्रमिको को ऑस्ट्रिया लाया गया और साथ ही केवल रोमानिया से छह विशेष ट्रेन लायी गयी। शुरूआत में जहाँ, सभी देखभाल श्रमिको को को बिना वेतन के 14 दिनों के लिये होटल में क्वेरेंटाइन किया गया,

>>

बाद में सिर्फ वे देखभालकर्ता जो टेस्ट में पॉजीटिव आये – और साथ ही जो उसी ट्रेन के डिब्बें में थे –को दोबारा बिना वेतन के क्वेरेंटाइन किया गया। चूंकि मध्य–जून तक मध्य यूरोपियन सीमायें फिर से खुल रही थी, चक्रीय प्रवासियों के लिये नियमित यात्रा पथ फिर से उपलब्ध थे।

महामारी के शुरू के कुछ महीनों के दौरान सख्त सीमापार शासन के परिणामस्वरूप, चेक गणराज्य में सीमा पार करके लौटने जाने वाले देखभालकर्ताओं को घर पर 14–दिवसीय के अनिवार्य सेल्फ–आइसोलेशन का सामना करना पडा। इसके अलावा, उन्हें कोविड–19 की नेगेटिव रिपोर्ट देनी थी, प्रत्येक 14 दिन में नये टेस्ट की जरूरत के साथ, जिसके लिये देखभालकर्ताओं को स्वयं को भुगतान करना होता था। प्रमुख मीडिया चर्चाओं ने चेक के चक्रीय प्रवासियों को एक महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्वास्थ्य खतरे के रूप में वर्णित किया। जैसा कि कुछ देखभाल श्रमिकों ने ऑनलाइन बताया, उनके परिवारों ने की अपने स्थानीय समुदायों में संभावित वायरस वाहक के रूप में सामाजिक कलंक का सामना किया। महामारी के शुरूआत में, यूक्रेनियन देखभाल श्रमिकों ने विशेष रूप से अक्सर असुरक्षा, डर, की भावनाओं को और इस चिंता को व्यक्त किया कि वे बेरोजगार हो जायेंगे और घर लौटने की बिना किसी संभावना के चेक गणराज्य के अंदर "बंद" हो जायेंगे। यह 4 मई तक नहीं हुआ कि आंतरिक मंत्रालय ने आपात स्थिति में प्रवासियों की नौकरियां खोने की स्थिति में नये परमिट प्राप्त करने के लिये 60–दिवसीय अवधि को रदद करने का एक नया नियम जारी नहीं किया था। चेक सीमा–पार श्रमिकों के स्थितियों की बडे पैमाने पर मीडिया कवरेज के विपरीत, महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे के श्रमिकों की सामाजिक प्रासंगिकता और उन्हें पर्याप्त सुरक्षा उपकरण उपलब्ध कराने की तत्काल आवश्यकता के बारे में चेक गणराज्य सामान्य चर्चाओं में भी प्रवासी देखभाल श्रमिकों की परिस्थितियां चुप्पी में खो गयी।

हंगरी में, जिसमें ऑस्ट्रिया और चेक गणराज्य समान मीडिया कवरेज का अभाव था, महामारी के प्रति सरकार की प्रतिक्रिया ने वृद्ध देखभाल पर अतिरिक्त दवाब बनाया: संभावित कोविड–19 रोगियों के लिये बेड खाली करने के लिये हजारों मरीजों को अस्पताल से घर भेज दिया गया। इसने देखभाल संबंधित अतिरिक्त मदद की मांग पैदा कर दी, जबकि उसी समय, रोमानिया और यूक्रेन के देखभाल श्रमिक अपने देश लौट गये, या हंगरी में आने के लिये सीमा पार नहीं कर सके। कई लोगों की नौकरियां जाने से और उसके साथ देखभाल सेवाओं के लिये भुगतान करने की उनकी इच्छा में कमी आने से लिव इन देखभाल बाजार और अधिक अस्थिर हो गया। जहाँ कई बाहर जाने वाले हंगेरियन देखभाल श्रमिक बोनस की शुरूआत के कारण ऑस्ट्रिया में लंबे समय तक रहने के लिये खुश थे, अन्य काम पर लौटना नहीं चाहते या नहीं लौट सकते थे, क्योंकि उन्हें घर पर देखभाल की बढी हुयी जिम्मेदारियों का सामना करना पडा था। सोशल मीडिया पर, ऑस्ट्रिया में कार्यरत हंगरियन देखभालकर्ताओं ने रोमानियन देखभालकर्ताओं के परिवहन के लिये प्राप्तकर्ता देशों के उपायों के खिलाफ अपनी नाराजगी व्यक्त की। उनमें से कई सहमत थे कि एक प्रवासी समूह को इन विशेषाधिकारों को प्रदान करना उनके स्वयं के (भविष्य के) रोजगार को खतरे में डाल सकता है।

> निष्कर्ष

महामारी के दौरान, प्राप्तकर्ता और भेजने वाले देशों में कार्य करने की स्थितियां और अधिक कमजोर हो गयी है। अपने गृह देशों में बदतर स्थितियों को सामना करते हुये, प्रवासी श्रमिक को महामारी के दौरान संभावित स्वास्थ्य और अन्य जोखिमों के बावजूद विदेश में नौकरियों की पेशकश को स्वीकार करने की ओर धकेल दिया गया है। सीमापार देखभाल श्रमिक बाजार को अक्सर किसी भी स्थिति में जीत के रूप में चित्रित किया जाता है, जिसमें वृद्ध व्यक्तियों को वहनीय देखभाल और प्रवासियों को घर पर उपलब्ध विकल्पों से अधिक भुगतान करने वाली नौकरी प्राप्त होती है। वास्तव में, यह मध्य यूरोपीय देखभाल बाजार राष्ट्रीयता–आधारित संरचनात्मक असमानताओं, कार्यबल का अंतर्राष्ट्रीय शोषण, और समतावादी और एकीकृत यूरोप के एक मिथक के मध्य अपवर्जन की एक व्यवस्था पैदा करता है। यद्यपि लिव इन देखभाल की नाजुकता पर महामारी के दौरान नया ध्यान दिया गया, देखभाल श्रमिकों और प्राप्तकर्ताओं की मांगों और जरूरतों को या तो संबोधित नहीं किया गया, या अपर्याप्त रूप से और असमान तरीके से संबोधित किया गया। देखभाल की आवश्यकता वाले लोगों और उनके रिश्तेदारों को बंद सीमाओं के कारण सार्वजनिक समर्थन की कमी और चिंता का सामना करना पड़ा। जहाँ कई उपाय लिव–इन देखभाल की निरंतरता को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से प्रारम्भ किये गए थे, श्रमिकों की रहने और काम करने की स्थितियां, जो कि महामारी के पहले भी अनिश्चित थीं, उपेक्षित ही बने रहीं। सामाजिक दूरी के कारण –देखभाल प्राप्तकर्ताओं और उनके रिश्तेदारों के बीच भी–देखभालकर्ताओं ने बढे हुये काम के बोझ और पृथक्करण का सामना किया। अंतर्राष्ट्रीय यात्रायें संक्रमण और/या (अवैतनिक) क्वेरेंटाइन का जोखिम लायी। अपने गृह देशों में फंसे हुये देखभाल श्रमिकों ने वित्तिय अभाव का सामना किया। और उनकी प्रणालीगत प्रासंगिकता के बारे में चर्चाओं के बावजूद, देखभाल श्रमिकों को सार्वजनिक स्वास्थ्य और राष्ट्रीय श्रम बाजार के लिये एक खतरे के रूप प्रस्तुत किया गया। महामारी का सामाजिक और वित्तिय बोझ इस प्रकार अंत में चक्रीय प्रवासियों के कंधो पर पडा। ■

सभी पत्राचार
ब्रिगिटे ऑलेनबचर को <brigitte.aulenbacher@jku.at>
पेट्रा एजेडिन को <brigitte.aulenbacher@jku.at>
डोरा गबरियल को <gabriel@demografia.hu>
माइकेल लीबफिंगर को <michael.leiblfinger@jku.at>
किंगा मिलानकोविक्स को <kinga@hekatefoundation.org>
वेरोनिका प्रिलर को <veronika.prieler@jku.at> पर प्रेषित करें।

> लॉकडाउन के दौरान

दक्षिण एशिया में सार्वजनिक समाजशास्त्र

देव नाथ पाठक, साउथ एशियन यूनिवर्सिटी, भारत द्वारा

अर्बु द्वारा चित्रण।

मानवीय भावनाओं, पीडा, और सामाजिक–राजनीतिक संकटों के संदर्भों में दक्षिण एशिया के बारे में पुनर्विचार करने का अवसर एक बार फिर लॉकडाउन, जो पूरे क्षेत्र में कोरोनावायरस के प्रसार को रोकने के लिये लागू किया गया था, के दौरान समाप्त हो गया। नाटक के टुकडों की एक त्वरित गणना इसे समझने में मदद कर सकती है। नेपाल और भारत के मध्य कालापानी, हिमालय का एक भूभाग, के बारे में एक पुराने विवाद के हाल ही में खुलने के दौरान, भूराजनीतिक राज्यों की पुरानी कहानी गूंज उठी। यह सब तालाबंदी के दौरान प्रवासी मजदूरों के अपने घर लौटने के बेचैन प्रयासों के संकट के मध्य हुआ। इसे, तालाबंदी के दौरान कोविड–19 पर एसएएआरसी (साउथ एशियन एसोसिएशन फॉर रीजनल कॉपरेशन) बैठक की विफलता के साथ जोडना चाहिये जिसने उजागर किया कि दक्षिण एशिया अपने कई सदस्य देशों के लिये एक खेल से अधिक कुछ नहीं है। यह भी निरपवाद रूप से सदस्य राज्यों की कभी–कभार होने वाली बैठकों में भागीदारी तक सीमित है जो उनकी दानशीलता एवं सामूहिक निधियों, साझा रणनीतिक हितों और द्विपक्षीय संबंधों, सुरक्षा और हिफाज़त पर एक टॉक शो से अधिक कुछ नहीं है। वहां लोगों की भावनाओं, सामाजिक–सांस्कृतिक गतिशीलताओं, संबंधों और प्रवाहों के लिये शायद ही कोई जगह है। यह शायद ही किसी को लगता है कि दक्षिण एशिया, एक अल्प–निरिक्षित सामाजिक इकाई के रूप में, पूरे क्षेत्र में साझा भावनाओं के अनुरूप संभावित सीमा–पार करूणा, सहानुभूति, और सहयोग की जरूरत पर जोर देता है। दक्षिण एशिया की एक परेशान करने वाली अमानवीय धारणा क्षेत्र में हावी है और मानवीय भावनाओं, पीडा और चिंताओं को धुंधला करती है। संक्षेप में, तथाकथित "कोविड–19 कूटनीति" के निष्ठुर उद्देश्य की प्रबलता के कारण, दक्षिण एशिया में पीडा, चिंता और भावनाओं के एक सार्वजनिक समाजशास्त्र के उभरने के एक क्षीण अवसर का भी अभाव है। और इसलिये, दक्षिण एशिया का एक भावनात्मक रूप से सच्चा समाजशास्त्र जिसमें मनुष्य और उनके संघर्ष केंद्र में हों, एक सदैव–अपूर्ण परियोजना बना हुआ है।

> प्रवासी मजदूरों का संकट

सार्वभौमिक रूप से शायद कोविड–19 एक अप्रत्यक्ष कृपादान लायाः यह शिक्षित मध्यम वर्ग और बौद्धिक वर्ग सहित कई लोगों के चतुर मुखौटों पर एक आघात था जो प्रवासी मजदूरों को समझ लेने का दावा करते थे। प्रवासी मजदूर पूरे क्षेत्र में नये–दिलचस्प बन गये थे, जिनका दोहरा सामाजिक अस्तित्व है, जिन्हें आम तौर पर "एक पैर शहर में– एक गांव में" के तौर पर वर्णन किया जाता है। वे सभी लोग जिन्होंने अर्थव्यवस्था के औपचारिक और अनौपचारिक क्षेत्रों के मजदूरों के व्यापक जनसमूह को समझ लेने का दावा किया था, वे उत्तर के लिये लडखडाते हुये पकडे गये। अखबारों और पोर्टलों में अभिमतों की एक श्रंखला ने सिर्फ क्षेत्र के विभिन्न

>>

हिस्सों में ग्रामीण–शहरी विभाजन के बारे में गूढ नीति शब्दजाल और घिसेपिटे विचारों को उजागर किया। ऐसी स्थिति में, राज्य की कमजोरियां स्पष्ट हो गयी। हमने पूरे क्षेत्र में महामारी के दौरान सरकारी मशीनरी और आपदा प्रबंधन की मशीनरी को लापता होते देखा। इसके बजाय, यहां पर भारत में बर्तन बजाने, दिये जलाने और स्वास्थ्य कर्मचारियों पर हेलीकॉप्टरों से फूलों की पत्तियां की बारिश करना जैसे स्पष्ट नजारे दिखाई दिये। पूरे दक्षिण एशिया में महामारी लोगों के लिये खराब नीतियों और कार्यों के कारण ज्यादा घबराहट का स्त्रोत बन गयी। यहां और वहां कुछ अपवाद हो सकते हैं, फिर भी महामारी के सामने दक्षिण एशिया के देशों ने मनुष्यों को जिस तरह से देखा, वह एक आम विफलता बनी हुई है।

इस सदंर्भ में, क्षेत्र में प्रवासी मजदूरों का वापस प्रवास एक आम संकट बन गया, जो समानुभूति दृष्टिकोण की अनुपस्थिति को रेंखांकित करता है। कोविड–19 के संदर्भ में दक्षिण एशिया में चर्चाओं का बडा भाग प्रवासन की जटिलताओं के आसपास मंडराता है। इसने हर किसी को अचानक से एक पुरानी सच्चाई की याद दिला दीः प्रवासी मजदूर अर्थव्यवस्था का एक बडे हिस्से की रीढ़ हैं। दक्षिण एशिया के शहरों में प्रत्येक मध्यमवर्गीय परिवार, प्रवासी मजदूरों की मदद के कारण फलता–फूलता है। फिर भी, दुर्भाग्य से, इन मजदूरों को भावनाओं, अनिवार्यताओं और संवेदनशीलता वाले महत्वपूर्ण व्यक्तियों के रूप में देखने की बजाय सिर्फ मशीन के दांते के रूप में देखा जाता है। यह आमतौर पर पूरे क्षेत्र में दिखायी देता है। बांग्लादेश ने वस्त्र उद्योग, जो देश में रोजगार का बडा योगदानकर्ता है, में अव्यवस्था का पर्याप्त ध्यान नहीं रखा और इसलिये कई श्रमिक ढाका और अपने गृहनगर और गांवों में आगे पीछे काम ढूढंने की उम्मीद लिये वापिस चले गये। भारत और नेपाल जैसे बांग्लादेश भी दूरदराज से लौटते श्रमिकों के लिये योजना बनाने में असफल हो गया। श्रमिक जो कभी प्रेषण अर्थव्यवस्था में योगदान देते थे वे भारत में भी बिना राष्ट्र के प्रवासी बन गये। कहा जा सकता है कि वे एक कृतघ्न देश में लौटे। भारत से नेपाल लौट रहे नेपाली श्रमिकों को रास्ते में बिना देखभाल के कई विकट मीलों तक चलना पडा। भारत में, वर्गों के अनुरूप व्यवस्था थीः विदेशी स्थानों से लौटने वाले बाहय–प्रवासियों के लिये उड़ानों की व्यवस्था की गई थी जबकि आंतरिक प्रवासियों के लौटने के लिये कोई सुविधा नहीं थी। हालांकि भारी तौर पर अल्प–प्रतिवेदित, पाकिस्तान में भी श्रमिकों की स्थिति बहुत सराहनीय नहीं थी। इन श्रमिकों, वे चाहे औपचारिक या अनौपचारिक क्षेत्र से हों, को सिर्फ बिक्री योग्य श्रम शक्ति के मूर्त रूप में देखा गया। उन्हें उचित भावनाओं, पौराणिक कथाओं, लोककथाओं, संस्कृति, और रोजमर्रा की जिंदगी वाले मनुष्यों के रूप में नहीं देखा गया है। यह दक्षिण एशिया को श्रमिकों की सामाजिक श्रेणी के रूप में पुनर्संगठित करने की जरूरत की ओर इशारा करती है।

> दक्षिण एशिया की भावनात्मक रूप से सत्यवादी समाजशास्त्र के लिए

दक्षिण एशिया में राज्य और भूराजनीति के प्रभावी तर्क से हमें बचना चाहिये ताकि दक्षिण एशिया के सूक्ष्म और भावनात्मक रूप के सत्यवादी समाजशास्त्र का अन्वेषण किया जा सके। इस तरह के समाजशास्त्र के भीतर, लोगों के दक्षिण एशिया के लिये नये काल्पनिक पर काम कर सकता है जिसमें सामाजिक वास्तविकता की बेहतर समझ के लिये भावनाओं और तर्क का संयोजन हो सके। ऐसा समाजशास्त्र भावनात्मक रूप से अस्थिर जनता के प्रति संवेदनशील होना चाहिये। भावनाओं के अपेक्षाकृत तरल ढांचे के अंतर्गत, हम एक दूसरे के पास खिसक सकते हैं, बराबर हो सकते हैं, समानुभूति रखने में सक्षम हो सकते हैं, और जोशीले हो सकते हैं। दुर्भाग्य से, भारत की "पडोसी पहले" की बहुत ख्याति–प्राप्त नीति, एक सामाजिक–सांस्कृतिक एकजुटता की रूपरेखा बनने की जगह एक कूटनीतिक नौटंकी अधिक बन गयी है। ऐसी नीति इस धारणा को बनाये रखती है कि भारत अपने पडोसियों से श्रेष्ठ है और इसलिये इसे उनका ध्यान रखना चाहिये। इस श्रेष्ठता की भावना के साथ, यह महामारी के सामने और परिणामस्वरूप राज्य का पतन, लोगों के बढते कष्ट, और आशा की कमी के कारण ढह जाता है। नीति नौटंकी के बजाय, बेहतर यह होता कि हम सभी, सीमा के अंदर और पार, एक साथ मिलकर इस चुनौती से निपटे। ■

सभी पत्राचार देव नाथ पाठक को <dev@soc.sau.ac.in> पर प्रेषित करे।

> सार्वजनिक समाजशास्त्र: महामारी का सामना करना

माइकेल ग्रिगोलो और **क्रेग लुंडी,** नॉटिंघम ट्रेंट यूनिवर्सिटी, यूके द्वारा

ये मुश्किल समय है जो कई तरीकों से सार्वजनिक समाजशास्त्र से पूछताछ करता है। कोविड–19 के प्रसार ने समाजों के अंदर विषमताओं और असमानताओं को आवर्धित किया है। इसने निजी हितों के ऊपर सार्वजनिक हितों की भूमिका पर बल दिया है। लाभ के तर्क, जो शिक्षा सहित सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में गहराई तक घुस गये हैं, और स्वयं को तब पुनः स्थापित कर रहे हैं, जब हमें यह कहा जा रहा है कि महामारी को नियंत्रण में रखा जा रहा है। हम यहां यूके में नॉटिंघम ट्रेंट यूनिवर्सिटी (एनटीयू) में सार्वजनिक समाजशास्त्र, विशेषकर हमारे स्नातकोत्तर कार्यक्रम जिसके मूल में सार्वजनिक समाजशास्त्र है, के अनुभवों कों बताना चाहते हैं। महामारी के दौरान सार्वजनिक समाजशास्त्र पर एक सामूहिक प्रतिबिंब को उद्धरित करने की आशा में, और सार्वजनिक समाजशास्त्र में रूचि रखने वाले व्यक्तियों के लिये साथ आने और आगे कडियां विकसित करने और सहयोग करने के एक अवसर के रूप में हम इसे प्रस्तुत करते हैं।

शुरूआत में, हम "सार्वजनिक समाजशास्त्र" से हमारा क्या अर्थ है, स्पष्ट करना चाहते हैं। 2005 के प्रभावशाली एएसए अध्यक्षीय संबोधन में, माइकल बोरावोय ने "सार्वजनिक समाजशास्त्र" को समाजशास्त्रियों और उनके सार्वजनिकों के मध्य एक साझा एजेंडा बनाने की ओर एक संवाद के रूप में समझा था। हम इससे सहमत हैं। हालांकि, हमारे विचार में, हमारे समाजशास्त्र कार्यक्रम के विद्यार्थी केवल हमारे "प्रथम सार्वजनिक" नहीं है – वे अपने आप में सार्वजनिक समाजशास्त्री हैं। अतः वे सिर्फ शिक्षणशास्त्र के प्राप्तकर्ता ही नहीं है, बल्कि प्रारम्भ से ही वे ज्ञान के सहनिर्माता और सक्रिय समुदाय अभ्यासकर्ता भी हैं। जैसा कि यह इंगित करता है कि एनटीयू में सार्वजनिक समाजशास्त्र के लिये हमारा दृष्टिकोण जिसे हम शिक्षणशास्त्र, अनुसंधान, और अभ्यास के बीच पुनरावर्ती संबध की तरह देखते हैं, के इर्द गिर्द घूमता है। राशि तारामंडलों में तारों की तरह, ये सभी तत्व दूसरों पर अर्थ, समर्थन, और संवर्धन के लिये निर्भर करते हैं। जहाँ प्रत्येक सार्वजनिक समाजशास्त्र गतिविधि में त्रिकोण के सभी तीनों बिंदुओं को स्पष्ट तौर पर शामिल करने की आवश्यकता नहीं है, कई करती हैं, और सभी तीनों के मध्य बंधनों का मजबूत करने में किसी ना किसी तरह से योगदान करती हैं।

इस दृष्टिकोण ने हमारे समाजशास्त्र स्नातकोत्तर कार्यक्रम की शिक्षणसामग्री और संघटन को निर्देशित किया है। हमारे मॉडयूल, सिद्धांतों से लेकर पद्धतिशास्त्र और व्यवहारिक दृष्टिकोणों तक, सार्वजनिक समाजशास्त्र के विभिन्न पहलुओं की चर्चा करते हैं। हमारे सेवा अध्ययन मॉडयूल में, विद्यार्थी स्थानीय गैर–लाभकारी संगठनों से सहयोग कर, एक विशेष परियोजना का निर्माण करते हैं जो संगठन की इच्छा और आवश्यकता को संबोधित करते हुये विद्यार्थी की क्षमताओं पर आधारित होती है। यह सब कुछ "उनसे सीखने" के विपरीत "साथ सीखने" के बारे में है और इस समझ के साथ प्रक्रिया का हिस्सा बनने के बारे में है कि जब ज्ञान और परिवर्तन की बात आती है, प्रक्रियाऐं एक बदलाव लाती हैं। इस सहयोग पर आगे बढ़ते हुये, विद्यार्थी अपने साथी संगठन के लिये एक रिपोर्ट बना सकते हैं, या यदि चाहें, एक अकादमिक जर्नल में आलेख लिख सकते हैं– पारंपरिक शोध प्रबंध के दो विकल्प, जो विभिन्न तरीकों से, शीघ्र अतिशीघ्र सार्वजनिक समाजशास्त्र में विद्यार्थीयों के योगदानों को बढावा देते हैं।

यद्यपि हमारी टीम के सदस्य एक दूसरे से बहुत कुछ साझा करते हैं –जैसे सामाजिक न्याय के लिये प्रतिबद्धता और अभी उल्लेखित सार्वजनिक समाजशास्त्र में "पुनरावर्ती" दृष्टिकोण का मूल्य – इस पर भी जोर देना चाहिये कि हमारे मध्य सार्वजनिक समाजशास्त्र के विभिन्न कार्यों में मतभेदों और विसंगतियों की भी कोई कमी नहीं है। इसके अतिरिक्त, जैसे हम दूसरों से सीखते हैं और व्यक्ति और एक सामूहिकता के रूप में बडे होते हैं, एनटीयू में सार्वजनिक समाजशास्त्र की जीवित वास्तविकता का विकास होना जारी है। हम इन दो पहलुओं को गुणों की तरह लेते हैं। वे यह समझाने में भी मदद करते हैं कि क्यों हमारे लिये समाजशास्त्र अधिक सटीक रूप से एक "आलोचनात्मक सार्वजनिक समाजशास्त्र" है, क्योंकि यह अतिरिक्त शब्द प्रतिभागियों के बीच आलोचनात्मक चिंतन और अभ्यास को प्रोत्साहित करने की एक इच्छा का सुझाव देता है।

हमारे स्नातकोत्तर कार्यक्रम के अलावा आलोचनात्मक सार्वजनिक समाजशास्त्र के माध्यम से काम करने को अन्य कई माध्यमों से जारी रखा गया है। 2017 में, हम ने एनटीयू में आलोचनात्मक सार्वजनिक समाजशास्त्र पर ब्रिटिश सोश्योलाजिकल एसोसियेशन के द्वारा वित्तपोषित, एक विशिष्ट–विषयक संगोष्ठी आयोजित की, और 2019 में, हमने हमारे शिक्षणशास्त्र पर शोध को *जर्नल ऑफ हायर एजुकेषन आउटरीच एंड एंगेजमेंट* (बर्टन, हॅचिंग्स, लुंडी और ल्योंस लेविस के द्वारा "इवेलुएटिंग द कॉम्प्लेक्सिटी ऑफ सर्विस लर्निंग प्रेक्टिसेज लैसन्स फ्रॉम एंड फॉर कॉम्प्लेक्स सिस्टम थ्योरी") में प्रकाशित किया। हमारी टीम के कुछ सदस्यों ने स्वैच्छिक क्षेत्रों और संगठनों के साथ काम और रोजगार के अनुभवजन्य प्रश्नों को समझने के लिये भागीदारी कार्य अनुसंधान का उपयोग किया, और वर्तमान में नये प्रक्षेपवक्र विकसित किये जा रहें हैं, उदाहरण के लिये, नॉटिंघम में मानवाधिकार के इर्दगिर्द इन गतिविधियों के दौरान पूरे समय, अकादमिक स्टॉफ, विद्यार्थी, और सामुदायिक भागीदार, पारस्पारिक लाभों के लिये एक साथ काम करते रहें हैं।

>>

''यह सामान्य की तरफ लौटने के बारे में नहीं है क्योंकि सामान्य भी समस्या का एक भाग है''

वर्तमान महामारी ने आलोचनात्मक सार्वजनिक समाजशास्त्र के साथ हमारे जुडाव पर हमें पुनर्विचार करने के लिये मजबूर किया है। हम ऐसे प्रश्नों से शुरूआत कर रहें हैं: इस महामारी ने मौजूदा असमानताओं को कैसे सवंर्धित किया है? महामारी को नियंत्रित करने के किन उपायों की आवश्यकता है और कौन से उपाय उचित है? वर्तमान परिस्थितियों में हम काम कैसे जारी रख सकते हैं? क्या हमारे काम को उसकी दिशा या सामग्री बदलनी चाहिए? हमारे लिये, इन सभी प्रश्नों के किसी भी उत्तर को शिक्षणशास्त्र, अनुसंधान और अभ्यास के विकास को जारी रखना चाहिये। इस योगदान को लिखने के समय (मई 2020), यूके सरकार ने "लॉकडाउन" को ढीला करना शुरू कर दिया है। हमारा सामुदायिक भागीदारों के साथ एक संवाद शुरू हो गया है कि कैसे कोविड–19 ने उन्हें और नॉटिंघम के कमजोर समुदायों को प्रभावित किया है। आगे देखते हुये, हमारे विचार इस बात में संलग्न हैं कि सार्वजनिक समाजशास्त्र कैसे इस महामारी को सबसे अच्छा जवाब दे सकता है, ऐसे तरीके से जो कमजोर की सुरक्षा करे और सामुदायिक कार्य के लिये सशक्त बनाये। चूँकि उच्च शिक्षा क्षेत्र बडे पैमाने पर वित्तिय कटौती का सामना कर रहा है, उसके ऊपर यह पहले से ही पीडित हैं, हमें आश्चर्य है कि यूके की शिक्षा व्यवस्था पर हावी गहरी अनिश्चितता और अस्थिरता के ये क्षण कैसे लाभ के तर्क का विरोध करने का एक अवसर प्रदान कर सकते हैं और साथ ही वे शिक्षा के अर्थ एवं यह समाज के लिए क्या करती हैं को पुनः आकारित कर सकते हैं।

आखिरकार, हम इस महामारी से एक बडे समुदाय का हिस्सा होने की मजबूत भावना के साथ बाहर आना चाहते हैं। वर्तमान लॉकडाउन के द्वारा पैदा हुए डर और पृथक्करण के खिलाफ, एक आलोचनात्मक सार्वजनिक समाजशास्त्री के रूप में हम मानते हैं कि मानव संबंधों के पुनर्निमाण में समाज और सामाजिकता की केंद्रीयता को फिर से साबित करना महत्वपूर्ण है। यह सामान्य तक लौटने के बारे में नहीं है क्योंकि, जैसा कि कुछ लोगों ने पहले से ही इंगित किया है, कि सामान्यता भी समस्या का एक भाग है। बल्कि, यह आगे बढकर एक बेहतर जगह पर जाने के बारे में है। हम सोचते हैं कि, समाजशास्त्र और सार्वजनिक समाजशास्त्र को एक महत्वपूर्ण तरीके से इसमें मदद करनी चाहिये। इन सभी कारणों के लिये, हम सार्वजनिक समाजशास्त्र के अन्य विद्वानों और विद्यार्थियों से उनके काम और उनके विचारों के बारे में सुनना चाहते हैं। ऐसा हम जैसे अन्य जो सार्वजनिक समाजशास्त्र के स्थान को प्रोत्साहित करने और उसके महत्व को समझते हैं के मध्य संबंधों को स्थापित करने की आशा में करते हैं। यदि आप इस संवाद में भाग लेने में रूचि रखतें हैं तो कृपया हमसे संपर्क करें। ■

सभी पत्राचार माइकेल ग्रिगोलो को <michele.grigolo@ntu.ac.uk> पर और क्रेग लुंडी को <craig.lundy@ntu.ac.uk> पर प्रेषित करें।

> सामाजिक दूरी : समाजशास्त्र के लिए प्रासंगिकता

सैयद फरीद अलातास, नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर द्वारा

कोविड महामारी के दौरान (शारीरिक) दूरी बनाये रखना। श्रेयः मिक बेकर। फ्लिकर.कॉम। कुछ अधिकार सुरक्षित।

यह शीर्षक पाठक को समाजशास्त्र से परिचित कराने का एक बहाना है। हालांकि, ऐसा करने के पुरुस्कार स्वरुप, मैं अंततः सामाजिक दूरी के विषय को संबोधित करूंगा, केवल यह दावा करने के लिए कि यह एक मिथ्या है। लेकिन हमें इस बिंदु को समझने के लिए यह समझना होगा कि समाजशास्त्र क्या है?

> समाजशास्त्र क्या है?

हम इस विषय के संस्थापक, अब्द अल–रहमान इब्न खलदुन (1332–1406 ईस्वी), पूर्व–आधुनिक काल के सबसे उल्लेखनीय मुस्लिम विद्वानों में से एक, से प्रारंभ कर सकते हैं। उन्होंने एक पूरी तरह से नए विज्ञान की स्थापना की जिसे उन्होंने मानव समाज का विज्ञान कहा (*इल्म अल–इज्तिमा' अल–इंसानी*)। इसे आज समाजशास्त्र कहा जाता है: समाज का अध्ययन। हंगरी में जन्मे जर्मन समाजशास्त्री कार्ल मैनहेम (1893–1947) के शब्दों में, समाज स्वयं को मानवों के एक साथ रहने के विभिन्न रूपों के रूप में व्यक्त करता है। ये स्वरुप, जिनमें सामाजिक संपर्क, सामाजिक दूरी, पृथक्करण, व्यक्तिकरण, सहयोग, प्रतिस्पर्धा, श्रम का विभाजन, और सामाजिक एकीकरण सम्मिलित हैं, मानव को, एक साथ रहने, जीने और विभिन्न प्रकार के संघों और समूह में सहभागिता करने की अनुमति देते हैं जो समुदायों और समाजों को बनाते हैं। यदि हमें सामाजिक व्यवहार और घटनाओं को समझना है तो समाज और समूह जीवन की प्रकृति को समझना महत्वपूर्ण है। इब्न खलदून इसे समझने में हमारी मदद करते हैं।

इतिहास में तथ्य और कल्पना के मध्य अंतर करने के लिए समाज की प्रकृति के बारे में जानना कितना आवश्यक है यह दर्शाने के लिए इब्न खलदून ने इदरीस वंश के मोरक्को के शासक इदरीस बिन इदरीस (803–828 ईस्वी) की वंश–परंपरा के बारे में ऐतिहासिक कृत्यों में विमर्शों का उदाहरण दिया। गप्पियों ने सुझाव दिया कि छोटा इदरीस, उसकी मां एवं इदरीस का एक ग्राहक रशीद के मध्य अनैतिक संबंधों का परिणाम था। हालांकि, तथ्य यह था कि इदरीस के पिता की शादी बरबर जनजाति में हुई थी और वे उनके साथ रेगिस्तान में रहते थे। इब्न खलदून का समाजशास्त्रीय विचार यह था कि मरुस्थलीय जीवन की प्रकृति ऐसी थी कि पूरे समुदाय को पता चले बिना वहां विवाहेतर मामलों का होना संभव नहीं था। यदि हमें मरुस्थलीय समाज के बारे में, रेगिस्तान के खानाबदोशों के बारे में और जिन तरीकों से वे अंतक्रिया करते हैं यानि कि उनकी सामाजिक परिस्थितियों के बारे में कुछ जानते हैं, तो हम यह निष्कर्ष निकालेंगे कि इदरीस के एक अवैध संबंध से पैदा होने की संभावना बहुत कम थी।

अतः, समाजशास्त्र सामाजिक की प्रकृति को समझने के और समुदायों, समाजों और सभ्यताओं के विकास में सामाजिक कारक कैसी भूमिका निभाते हैं, के बारे में है। मानव अंतर्क्रिया, सहयोग और संसर्ग की व्याख्या करने के उद्देश्य के साथ समाजशास्त्रीय विचार अक्सर अकादमिक जगत से बाहर निकल जाते हैं। वे राजनेताओं द्वारा उठाए गए और विस्तारित किए गए और इन्होनें दुनिया भर के देशों में नीति निर्माण को प्रभावित किया।

>>

> इब्न खलदून पर राजरत्नम और रोनाल्ड रीगन

सिंगापुर के उप प्रधान मंत्री (1980–1985) और विदेशी मंत्री, दिवंगत एस.राजरत्नम ने इब्न खलदून के विचारों को इक्कीसवीं सदी में सिंगापुर के भविष्य को प्रतिबिंबित करने के लिए काम में लिया।

दिसंबर 1979[1] में दिए गए भाषण में उन्होंने इस प्रश्न से निपटा कि कैसे एक समाज *वर्टु* को प्राप्त और हासिल कर सकता है। वह *वर्टु* जिसे मैकियावली के सद्गुणों के अर्थ में समझा जाता है जैसे गर्व, शौर्य, कौशल, बल और क्रूरता, जो किसी को एक स्थिति में महारत हासिल करने में सक्षम बनाते है। भविष्य में धकेलने वाली आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और तकनीकी ताकतों से निपटने के लिए समाज को एक *वर्टु* की आवश्यकता थी जिनके सामने कार्य करने में विफलता इसके पतन में फलीफूत होती। इरानी क्रांति के दौरान राज्यरत्नम अपने विचारों को निरूपित कर रहे थे जिसने उन्हें इस्लामी सभ्यताओं के उदय और पतन पर भी चिंतन करने को प्रेरित किया। इसने उन्हें अपने समाजशास्त्रीय मित्र सैयद हुसैन अलातास की सलाह पर इब्न खलदून की अरब, बरबर और अन्य राष्ट्रों के इतिहास का तीन खंड, *अल–मुकदिम्माह*, का परिचय पढने को प्रेरित किया।

राज्यरत्नम ने देखा कि इब्न खलदून की मुख्य अवधारणा *'असबिया'* मुख्य रूप से जनजातियों, ग्रामीणों और अग्रणी बस्तियों में समूह एकजुटता की भावना ने शहरों में रहने वाले लोगो की तुलना में घुमन्तु समाज को अधिक लचीला, कड़ा, बहादुर, और आत्मनिर्भर बनाया था। ये *असबिया* के बाध्यकारी बंधन थे जिन्होंने इन खानाबदोशों को शहरों को जीतने, एवं नये राजवंश को बनाने में सक्षम बनाया। राजरत्नम की अंतर्दृष्टि ने उन्हें यह सुझाव देने के लिए तैयार किया कि इब्न खलदून का *'असबिया'* मैकियावली का *वर्टु* था।

राजरतनम के भाषण के लगभग दो वर्ष पश्चात, अमरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन ने खलदून के सुविख्यात उद्धरण का हवाला दिया "राजवंश के प्रारंभ में यह ज्ञात होना चाहिए कि कराधान में छोटे कर निर्धारण से अधिक राजस्व प्राप्त होता है। राजवंश के अंत में, बडे कर–निर्धारण से कराधान कम राजस्व प्रदान करता है। इसका कारण यह है कि जब राजवंश धर्म के मार्ग (*सुनान)* का पालन करता है तो वह केवल ऐसे करों को लगाता है जो धार्मिक कानून द्वारा निर्धारित किए जाते हैं जैसे कि दान कर, भूमि कर, और व्यक्ति कर।"

राष्ट्रपति रीगन ने इब्न खलदून को आर्थिक सिद्धांत के आपूर्ति पक्ष के एक प्रारंभिक प्रतिपादक के रूप में उद्धृत किया। वह सिद्धांत जिस पर उनके प्रशासन की कई नीतियां आधारित थी, जिनके अनुसार कर दरों में कटौती अर्थव्यवस्था को उत्तेजित करेगी जिसके परिणामस्वरूप अधिक कर राजस्व का सर्जन होगा। इब्न खलदून का हवाला देते हुए रीगंन ने कहा "हम छोटे आकलन तक जा कर बड़े राजस्व की कोशिश कर रहे हैं।"[2]

इब्न खलदुन के लिए, शासक वर्ग के मध्य विलासिता की खोज के साथ *'असबिया'* का पतन का परिणाम कराधान की उच्च दरें होंगी। समस्या पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ती है जैसे–जैसे सत्तारूढ़ अभिजात वर्ग अधिक परिष्कृत और विलासी जीवन शैली विकसित करता है, जिसके फलस्वरूप करों और आकलन में वृद्धि की आवश्यकता होती है। अततः ये ऐसे स्तरों तक पहुंच जाते हैं जो उत्पादक गतिविधियों को कम करते हैं या रोकते हैं, जो बदले में कर राजस्व में कमी लाते हैं, जिसके कारण राजस्व के उत्पादन और राजकोषीय चक्र में गिरावट आती है और अततः इनका अंत हो जाता है। इस समस्या ने राजरत्नम को भी चिंतित किया। उन्हें विश्वास था कि जैसे सिंगापुर ने 21वीं सदी में प्रवेश किया और उसे "फोर्टयूना–विश्वशक्तियों के चपल खेल से सुरक्षित रूप से आगे बढ़ना था", उसे मैकियावली के *वर्टु* या इब्न खल्दुन के *"असबिया'* की आवश्यकता थी।

> दुर्खीम और आत्महत्या का अध्ययन

जहॉ मनोविज्ञान मस्तिष्क और वैयक्तिक विवेक का विज्ञान है, समाजशास्त्र सामूहिक चेतना का एक सामाजिक तथ्य के रूप में अध्ययन करता है। औसत लोगों के लिए सामान्य और समाज को एकजुट रखने वाली नैतिक, धार्मिक और संज्ञातात्मक मान्यताओं और भावनाओं को सामूहिक चेतना समाहित करती है। मनोवैज्ञानिक व्याख्याँ, विशिष्ट व्यक्तियों की तरफ निर्देशित होती है जबकि समाजशास्त्रीय व्याख्याओं का उद्देश्य समूह विशेषताओं के आधार पर पूरे समूह के कारणों को समझना है। समाजशास्त्र के आधुनिक विषय के संस्थापकों में से एक, इमाइल दुर्खीम (1858–1917) और जिन्होंने समाजशास्त्र को एक पृथक विषय के रूप में स्थापित किया, ने आत्महत्या के अध्ययन को यह दिखाने के लिए काम में लिया कि समाजशास्त्र मनोविज्ञान से कैसे भिन्न था।

दुर्खीम ने आत्महत्या का अध्ययन केवल एक महत्वपूर्ण सामाजिक प्रधटना का अध्ययन करने हेतु नहीं किया बल्कि विद्वजन समुदाय को यह दिखाने के लिए भी किया कि एक तथाकथित वैयक्तिक क्रिया जिसके लिए मनोवैज्ञानिक व्याख्याएं पर्याप्त थीं, को समझने में समाजशास्त्र भूमिका निभा सकता है।

दुर्खीम समूहों में आत्महत्या की दरों में अंतर की व्याख्या करना चाहते थे। यह मानते हुए कि एक समूह से दूसरे समूह में जैविक और मनोवैज्ञानिक कारक स्थिर रहते हैं, समूहों में आत्महत्या दर में भिन्नता जैविक और मनोवैज्ञानिक कारकों की बजाए समाजशास्त्रीय कारकों में भिन्नता के कारण होगी। उन्होंने अन्य कारकों को पहले हटाकर अपने सिद्धांत का अनुभाविक रुप से परीक्षण किया। उदाहरण के लिए, उन्होंने प्रजाति को एक कारक के रूप में हटा दिया क्योंकि एक ही प्रजाति में समूहों के मध्य आत्महत्या की अलग–अलग दरे थी।

विभिन्न लोगों के मध्य आत्महत्या की विभिन्न दरों की व्याख्या करने के लिए दुर्खीम ने एकीकरण की डिग्री और एक समाज या समूह में विनियमन की डिग्री जैसे विशिष्ट सामाजिक तथ्यों को प्रयोग में लिया। एकीकरण की मात्रा और विनिमयन में भिन्नता आत्महत्या के चार प्रकारों में से किसी भी एक में फलीभूत हो सकती हैः अहंकारी आत्महत्या, परोपकारी आत्महत्या, विलगाव आत्महत्या और भाग्यवादी आत्महत्या।

आइए हम आत्महत्या के प्रकारों में से दो उदाहरण लेते हैं। अहंकारी आत्महत्या इसलिए होती है क्योंकि, एक व्यक्ति समूह में अच्छी तरह से एकजुट नहीं है। यदि सामूहिक चेतना कमजोर होगी और लोग अपनी मर्जी से निजी हितों को पूरा करने के लिए स्वतंत्र होंगे तो यह अनियंत्रित अहंकार व्यक्तिगत असंतोष पैदा कर सकता है। सभी आवश्यकताओं की संतुष्टि नहीं हो सकती है और वे जिनकी संतुष्टि हो सकती है, वे और आवश्यकताओं को पैदा करेगी जिससे असंतोष पैदा होगा और अततः कुछ लोगों के लिए आत्महत्या। यद्यपि यदि व्यक्ति एक मजबूत ताकतवर एकीकृत समूह जैसे कि परिवार या धार्मिक समूह में रहता हैं, ये मजबूत सामूहिक चेतना प्रदान करते हैं और आत्महत्या को हतोत्साहित करते हैं।

परार्थवादी आत्महत्या तब होती है जब सामाजिक एकीकरण बहुत ताकतवर हो। इसका एक प्रसिद्ध उदाहरण 1978 में जोनसटाउन

>>

गुयाना में जिम जोन्स पादरी के अनुयायियों की सामूहिक आत्महत्या है। पादरी के अनुयायियों ने उनकी खातिर स्वेच्छा से विष पिया और अपने बच्चों को भी दिया। अनुयायियो के मजबूती से एकीकृत समाज का भाग होने के कारण और उनके यह मानने के कारण कि ऐसा करना उनका कर्तव्य था, उन्हें आत्महत्या करने के लिए राजी या मजबूर किया गया।

जैसा कि हमने देखा है: समाजशास्त्र सामाजिक के बारे में है: अंर्तक्रिया, सहयोग और मनुष्यों के मध्य सहचर्य और सामाजिक कारक उनके विकास में कैसे भूमिका निभाते हैं। यह हमें सामाजिक दूरी के बारे में क्या बताता है? क्या यह वास्तव में सामाजिक दूरी है?

मौजूदा कोरोना वायरस महामारी के दौरान हमने "सामाजिक दूरी" संबोधन सुनाई देने लगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, दूरी बनाए रखने का अर्थ "स्वयं और दूसरे के मध्य कम से कम, एक मीटर (3 फीट) की दूरी रखना है। कई इसे सामाजिक दूरी कहते हैं अर्थात घर के बाहर लोगों के मध्य शारीरिक दूरी बनाए रखने, भीड़ में एकजुट नहीं होने और सामूहिक समारोह में बचने का अभ्यास।

सामाजिक दूरी से जो मतलब है वह वास्तव में शारीरिक दूरी है। वास्तव में, सामाजिक दूरी की कई परिभाषाएं बताती है कि इसे शारीरिक दूरी के रूप में भी जाना जाता है। यह एक गलत धारणा पैदा करता है कि सामाजिक और शारीरिक किसी तरह से एक ही के बारे में है।

सामाजिक दूरी समाजशास्त्र में एक बहुत महत्वपूर्ण अवधारणा है। सार्वजनिक स्वास्थ्य के सम्बोध के रूप में, यह अपेक्षाकृत नया है लेकिन समाजशास्त्र में इसे द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्व के काल में ट्रेस किया जा सकता है। इसका अर्थ शारीरिक या स्थानीय दूरी के समान नहीं है, यद्यपि इसका अर्थ यह नहीं है कि सामाजिक और शारीरिक दूरी एक साथ मिल नहीं सकती है।

सामाजिक दूरी शारीरिक दूरी या निकटता के बावजूद सामाजिक संपर्क के अभाव के बारे में है। बारम्बारता और अधिक अंतरंग सहचर्यो से लक्षित सामाजिक संपर्क स्वयं प्राथमिक हो सकता है, जिसमें परिवार सदस्यों, सहकर्मीयों और मित्रों जैसे प्राथमिक समूहों में आमने–सामने, सीधे दृश्य और श्रवण संलग्नता सम्मिलित हो सकती है या नहीं भी। या सामाजिक संपर्क दैतीयक हो सकता है जिसमें हमारे समूह के बाहर के लोगों के साथ कम बारंबार और कम अंतरंग सहचर्य सम्मिलित हो। किसी भी मामले में, सामाजिक संपर्क सामाजिक निकटता के बारे में और शारीरिक निकटता की डिग्री की परवाह किए बिना, व्यक्तियों के मध्य सामाजिक संबंधों के बारे में है।

दो लोग शारीरिक रूप से दूर हो कर लेकिन सामाजिक रुप से निकट या अतरंग हो सकते हैं अर्थात सामाजिक संपर्क रखने वाले। कोरोनावायरस के प्रसार को रोकने के लिए लगाये गए यात्रा प्रतिबंधों के कारण राष्ट्रीय सीमाओं द्वारा अलग किये गए। सामाजिक मीडिया के माध्यम से जब एक युगल एक दूसरे से मिलते हैं, वे सामाजिक दूरी का अभ्यास नहीं कर रहे है। भौतिक दूरी के बावजूद, उनके मध्य अंतरंग सामाजिक संपर्क है।

दूसरी तरफ, ऐसे सामाजिक संपर्क के बिना शारीरिक रूप से निकट होना संभव है। इस मामले में शारीरिक निकटता सामाजिक दूरी के साथ सह–अस्तित्व में है। उदाहरण के लिए जेब्रा क्रॉसिंग पर सड़क पार करते हुए दो व्यक्ति यद्यपि शारीरिक रूप से निकट हो सकते हैं, पर वे, एक दूसरे के लि, अजनबी हैं। उनकी क्रियाएं, और व्यवहार एक दूसरे की तरफ अभिमुखित नहीं है और उनके मध्य कोई सामाजिक संपर्क नहीं है। दूसरा उदाहरण किराने की दुकान में एक वस्तु के क्रय का होगा। वहां शारीरिक निकटता है लेकिन सामाजिक संपर्क एक लघु मौद्रिक लेन–देन तक सीमित है।

इस महामारी काल में, हमे शारीरिक, न कि सामाजिक दूरी को प्रोत्साहित और लागू करना चाहिए। कोरोनावायरस के प्रसार को सीमित करने के लिए शारीरिक दूरी की आवश्यकता है। शारीरिक दूरी और शारीरिक समीपस्थ मेलजोल के लिए, संभावनाओं के अभाव के कारण ही हमे सामाजिक दूरी नहीं बल्कि सामाजिक संपर्क के अन्य रूपों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।

हम क्या कहना चाहते हैं के बारे में सोचने एवं स्पष्ट रूप से बात करने का समय है। हमे शारीरिक दूरी और सामाजिक संपर्क के बारे में और एक दूसरे से सामाजिक दूरी बनाए रखते हुए हम सामाजिक निकटता को कैसे बढ़ा सकते हैं, के बारे में सोचना चाहिए। ■

सभी पत्राचार सैयद अलतास को <alatas@nus.edu.sg> पर प्रेषित करें।

1. "राजा अतीत, एवं भविष्य पर दृष्टि डालते हैं।" *द स्ट्रेट्स टाइम्स*, 21 दिसंबर, 1979 ।
2. रोबर्ट डी मैकफादेन, "रीगन इस्लामिक विद्वान का उद्धरण देते हैं" *द न्यूयॉर्क टाइम्स*, 2 अक्टूबर, 1981 ।

आधुनिक भारतीय समाजशास्त्र के एक प्रणेता

मीर सुहिल रसूल, कश्मीर विश्वविद्यालय, भारत द्वारा

2018 में योगेंद्र सिंह

योगेंद्र सिंह (1932–2020) उत्तर औपनिवेशिक भारत के प्रतिष्ठित समाजशास्त्रियों में से एक थे। सिंह सामाजिक स्तरीकरण, सामाजिक परिवर्तन निरंतरता, भारतीय समाजशास्त्र, आधुनिकीकरण और सांस्कृतिक परिवर्तन जैसी अवधारणाओं पर भारतीय समाजशास्त्र में अग्रणी काम करने के लिए बौद्धिक और अकादमिक हलकों में एक प्रमुख हस्ताक्षर थे। उनके लेखन में विविध विषयों और दृष्टिकोणों का समावेश है क्योंकि वे एक विषय से दूसरे में समान रुचि और सहजता के साथ गति की है।

प्रोफेसर सिंह ने भारतीय समाज में आधुनिकता और परंपरा के अध्ययन और विश्लेषण का नेतृत्व किया था। उनके काम का एक बड़ा भाग आधुनिकता, परंपरा और सामाजिक स्तरीकरण से संबंधित है। उन्होंने *भारतीय समाज* को समझने और उसका विश्लेषण करने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण का उपयोग किया। 1973 की उनकी उल्लेखनीय महान कृति *भारतीय परंपरा का आधुनिकीकरण* ने भारतीय समाजशास्त्र के लिए नए आयाम खोले। उन्हें 10 मोनोग्राफ तथा पुस्तकें जिनमें *द इमेज ऑफ मैन* (1983), *आईडियोलॉजी एंड थ्योरी इन इंडियन सोशलॉजी* (2004), और संपादित श्रृंखला *सोशल साइंसेजः कम्युनिकेशन, एंथ्रोपोलॉजी एंड सोशियोलॉजी* शामिल हैं, का श्रेय जाता है, जिसमें उन्होंने सूचनात्मक सिद्धांत और समाजशास्त्र के इंटरफेस पर काम करते हुए संकेत और संचार के महत्व पर ध्यान केंद्रित किया था।

प्रोफेसर सिंह का असहमति को प्रोत्साहित करने और समाजशास्त्रीय संभाषण की एक विधि के रूप में खुले संवाद का उपयोग करने में दृढ़ विश्वास था। वर्तमान महामारी के दौरान भी उनका ध्यान समाजशास्त्रीय प्रतिमानो के पुनर्निर्माण पर था जो पश्च–औद्योगिक समाजों के संकट के परिदृश्य को विखंडित करते हैं। सिंह अपने अंतरभाग से यथार्थवादी थे और सिद्धांतों के अनुभवजन्य आधार में विश्वास रखते थे, इसलिए उन्हें अक्सर एक "समाज वैज्ञानिक" कहा जाता है, जो संकीर्ण विषयगत वर्गीकरण के विभन्धन से ऊपर है। समाजशास्त्रीय बुलेटिन में उनके लेखों से एक में उन्होंने वस्तुपरकता और यथार्थवाद का आह्वान करते हुए ज्ञान के समाजशास्त्र के महत्व पर जोर दिया। उन्होंने समाजशास्त्र के सामने उभरती चुनौतियों का एक प्रखर और सटीक कैटलॉग बनाया और एक अंतरराष्ट्रीय "रेफरेंस मॉडल" से अलग होने का आह्वान किया। उन्होंने क्षेत्रीय अध्ययन के महत्व पर जोर दिया जो एक "सामाजिक स्थान" के वस्तुनिष्ठ अस्तित्वगत और ऐतिहासिक विशेषताओं को दर्ज और प्रलेखित करने में सक्षम बनाता है। उनका ज्ञान और विज्ञान के लोकतांत्रिककरण में दृढ़ विश्वास था। उन्होंने भारतीय समाज के सरंचनात्मक और सांस्कृतिक पहलुओं का अध्ययन करने के लिए एक एकीकृत मॉडल विकसित किया। उनका विचार था कि एक विशेष स्थानिक संदर्भ का अध्ययन करने के लिए एक विशेष दृष्टिकोण विकसित करना आवश्यक है। अपने एक साक्षात्कार में उन्होंने दक्षिणपंथी राष्ट्रवाद के उदय को बढ़ती मध्यमवर्गीय चिंताओं के अनुरूप में वर्णित किया, और शैक्षिक प्रगति को अति–राष्ट्रीयतावादी राजनीति के इस रूप के ''बढ़ते हुए'' खतरे के प्रतिकारक के रूप में सुझाया।

योगेंद्र सिंह ने बताया कि कैसे भारतीय समाजशास्त्र ने "ग्रामीण अध्ययन" के आसपास अपने विषयगत संभाषण को विकसित किया तथा 1950 से 1980 तक अवधारणाओं के स्वदेशीकरण के साथ संघर्ष किया। जहां मुख्यधारायी समाजशास्त्र अभी भी अमेरिकी प्रकार्यवाद में स्थिर था और एक द्वंदात्मक–भौतिकवादी समझ का उदय भी उन वर्षों के लिए आदर्श रूप था; ये दोनों ही घटनाक्रम भारतीय समाजशास्त्र को आकारित करने में महत्वपूर्ण थे। सिंह भारतीय समाजशास्त्र की अग्रिम अनुकूलन और परिवर्तन की अंतर्निहित क्षमता के बारे में आश्वस्त थे, जिसमें वैश्विक समाजशास्त्र के संभाषण को परिभाषित तथा उस पर पुनः कार्य करने एवं भारतीय ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक विशिष्टता और सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लक्ष्यों के अनुरूप अवधारणाओं के आवश्यक स्वदेशीकरण के बीच एक होड़ सम्मिलित थी। उनके विचारों ने हमें यह

>>

बताया कि भारतीय समाजशास्त्र ने कैसे पश्चिमी समाजशास्त्र की अवधारणाओं को आयात करने के परे जाकर, अपने स्वयं के विशिष्ट संभाषण को चित्रित किया है।

अपने जीवन काल के दौरान, प्रोफेसर सिंह कई प्रतिष्ठित संगठनों और संस्थानों के सदस्य रहे। वे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) में सामाजिक विज्ञानं संस्थान के स्कूल ऑफ सोशल साइंसेज के सामाजिक पद्धति अध्ययन केंद्र के संस्थापकों में से एक और प्रमुख वास्तुकार थे। अपनी विनम्र प्रकृति और बौद्धिक इमानदारी के कारण, वे कभी भी अकादमी पदानुक्रम के शीर्ष पर पहुंचने के लिए वे कभी भी अति– महत्वकांक्षी नहीं हुए थे। उनकी चिंताएं अकादमिक की तुलना में कम राजनीतिक थी, जो उनके अकादमिक कैरियर में उनके द्वारा लिखे गए लेखन में प्रतिबिंबित होती हैं। विभिन्न भारतीय संस्थानों में समाजशास्त्र को पढ़ाने और पाठ्यक्रम की रुपरेखा डिजाइन करने के अलावा, उन्होंने अपने कई छात्रों और साथी शोधकर्ताओं को समाज को समझने के तर्कपूर्ण और अतिवादी मार्गों के मूल्य से अवगत कराया द्य अपनी वृद्धावस्था के दौरान, उन्होंने पूरी दृढ़ता और जीवंतता के साथ अपने अनुसंधान और शैक्षणिक गतिविधियों को बिना किसी व्यवधान के जारी रखा।

प्रोफेसर सिंह के विचारों और लेखन का समकालीन समाजशास्त्र और भारतीय समाज पर स्थाई प्रभाव पड़ा है। वे अपने दृष्टिकोण में स्पष्ट थे तथा विचारों की अस्पष्ट रेखाओं में विश्वास नहीं करते थे। अपने जीवन काल में रचनात्मक रूप से परिवर्तित समाज को देखने की इच्छा को संजोए, वे वास्तविक सामाजिक तथ्यों और सामाजिक जीवन का अध्ययन करने में विश्वास करते थे जो व्यक्तिगत कार्यों और प्रवृत्तियों को निर्धारित करते हैं। उन्होंने भारतीय समाज को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण मुद्दों का तीक्ष्ण एवं गहन अध्ययन किया। उनके कई लेखन समकालीन संसार में उतने ही प्रासंगिक और उपयोगी हैं जितने कि वे तब थे जब पहली बार लिखे गए थे।

उनके निधन के साथ भारत ने एक दूरदर्शी समाजशास्त्री खो दिया है, जिनके योगदान और भारतीय समाजशास्त्र के पुनर्जन्म और आधुनिकीकरण के प्रयासों और योगदानों की कभी भी अनदेखी नहीं की जा सकती है। उनकी अमिट विरासत ने समाज के सामने आने वाले विषयों के अनुसंधान हेतु जिज्ञासु विश्लेषणात्मकता की भावना विकसित करने में छात्रों के दिलो और दिमाग पर एक गहरी छाप छोड़ी है। हम उन्हें हमेशा एक समाजशास्त्री, शिक्षक, दार्शनिक और त्रुटिहीन बौद्धिक सत्यनिष्ठ व्यक्तित्व के रूप में याद रखेंगे। ■

सभी पत्राचार मीर सुहिल को <mirsuhailscholar@gmail.com> पर प्रेषित करें

> आमूल परिवर्तन के साथ (पुन:) एकीकरण की तात्कालिकता पर

एस.ए. हामिद होसैनी, न्यूकासल विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रेलिया द्वारा

रूपांतरण योग्य प्रतिरोध विकसित करने के लिए, हमें सक्रियता एवं परिवर्तनकारी विद्धवता के मध्य एकीकरण की तलाश करनी होगी। हामिद होसैनी द्वारा कलाकृति।

कोविड–19 ने दिखाया कि आमूल परिवर्तन न केवल संभव है बल्कि बड़े अंतःस्फोट को रोकने के लिए अपरिहार्य भी है। धीमी गति अथवा वि–वृद्धि– जहां सुखवादी कल्याण के बजाय सामूहिक "बेहतर जीवन" प्रधानता प्राप्त कर रहा है,– में रहने की स्थिति ने हमें पुराने सामान्य में लौटने की असंभवता की ओर जागृत किया है। अब वह समय आ गया है कि हम "कोई विकल्प नहीं है" के पूंजीवादी मिथक के घातक संज्ञानात्मक विषाणु से अपने दिमाग को क्वारंटाइन कर दें। यद्यपि दर्दनाक रूप में, लॉकडाउन ने हम कहां हैं? हम यहां तक कैसे पहुंचे है? और हम पश्च–महामारी संसार को आकार देने के लिए अपनी रचनात्मक कल्पनाओं और राजनीतिक कार्यों को एकजुट करने के लिए क्या कर सकते हैं?, पर चिंतन करने के लिए समय प्रदान किया है।

> हम कहां हैं?

संक्षेप में, दुनिया भर में आमूल परिवर्तनवादी, व्यापक कार्यवाहियों की अनुपस्थिति में हम मनुष्य एक पूर्ण सभ्यतात्मक विध्वंस की राह पर हैं। संभावनात्मक रुप से विध्वंस तबाही की अन्तर्सम्बन्धित सोपान की सर्पिल घटनाओं के रूप में होगा जिसमें क्षेत्रीय जलवायु आपदा, वैश्विक महामारी, आर्थिक मंदी, गंभीर खाद्य, जल और ऊर्जा का संकट जिसके परिणामस्वरूप विस्थापन और अशांति, वैश्विक संघर्ष और गृह युद्ध, अधिक गंभीर जलवायु तबाही और वर्तमान जैव विविधता में गिरावट के त्वरण होंगे।

> हम यहां कैसे पहुंचे?

संक्षेप में कहते हुए, आधुनिक पूंजीवाद के साथ उलझे उपनिवेशवाद से उत्पन्न "सभ्यता" के एक विशिष्ट रूप ने हाल के दशकों में पूर्ण वैश्विक उभार हासिल किया। विश्व सभ्यता की इस प्रणाली की विशेषता इसकी बुनियादी निर्भरता पर है : (1) पूंजी, मूल्य के अंतिमस्रोत के रूप में श्रम की जगह लेती है; (2) कार्बन जीवाश्म ईंधन या आम भाषा में निष्कर्षण; (3) सामाजिक–पारिस्थितिक संबंधों के अथक परिशोधन के माध्यम से बाध्यकारी आर्थिक विकास और दुनिया भर में उपभोक्तावादी संस्कृतिओ के निरंतर प्रचार के माध्यम से, जनसाधारण का एक बहु–शताब्दी सामूहिक विनियोजन; (4) औपनिवेशिकता, अर्थात अंतर–अनुभागीय पदानुक्रम की प्रमाणिकता को बनाए रखने के लिए आवश्यक अविरत स्तरीकरण शक्ति संबंध और ज्ञानात्मकता; (5) एकाधिकार–वित्त पूंजी के उदय से बढ़ी भ्रष्ट राजनीति, कॉर्पोरेट राज्य–हित लाभ संचालित निगरानी में बढ़ोतरी, डाटाफिकेशन, जैव एवं न्यूरो–प्रौद्योगिकी तथा युद्ध। चलिए, उपरोक्त पांच अंतर्भूत विशेषताओं को पांच सी से संबोधित करते हैं।

>>

व्यवस्था स्वाभाविक रूप से संकटग्रस्त है चूँकि 5सी को पृथ्वी की क्षमता के अंतहीन विस्तार की आवश्यकता होती है। चूँकि हम पहले ही पृथ्वी की जैव क्षमता को पार कर चुके हैं और क्षितिज पर कोई भी वर्तमान तकनीकी समाधान नहीं है जो इस क्षमता को बरकरार रख सके, आधुनिक सभ्यता के आरोह के पीछे की वही विशेषताएं अब इसके मरण में योगदान कर रही हैं।

> वि–कार्बनीकरण पर्याप्त नहीं है

अन्य को चुनौती दिए बिना उपरोक्त निर्भरताओं में से किसी को भी समाप्त करना मरणोन्मुख है। प्रगतिशील संस्थानों द्वारा प्रचारित सबसे लोकप्रिय समाधान के रूप में वि–कार्बनीकरण के उदाहरण को लें। नवीकरणीय स्रोतों का दोहन करने वाली नई प्रौद्योगिकीयां गंभीर सामाजिक–राजनीतिक और आर्थिक बाधाओं का सामना करती हैं। पृथ्वी को बचाने के लिए उनकी प्रगति की दर बहुत धीमी है। इससे भी महत्वपूर्ण यह बात है कि उन्हें शासक वर्ग के कुछ वर्गों द्वारा पूंजी के आधिपत्य को बढ़ाने के संभावित साधन के रूप में माना जाता है।

तथाकथित पश्च–कार्बन नीतियां इसे समाप्त करने के बजाय शेष 5C पर व्यवस्था की निर्भरता को केवल बढ़ाती है। अंतर्निहित सामाजिक–आर्थिक और जैव–राजनीतिक संरचनाएं जिन पर तकनीकी क्रांतियां आधारित हैं और जिनके लिए वे योगदान करते हैं, को गहन रूप से चुनौती दी जानी चाहिए ताकि सार्थक संक्रमण का स्वामित्व और निर्देशन व्यक्तियों द्वारा किया जा सके। इसके लिए सामाजिक संस्थानों के न केवल (1) वि–कार्बनिककरण, बल्कि (2) वि–पूंजीवादीकरण (3) वि–वृद्धि (4) वि–उपनिवेशीकरण और (5) गहन लोकतंत्रिकरण की आवश्यकता है; अर्थात संगठित जीवन को बचाने के लिए एक वैश्विक संघर्ष के पांच डी। इस प्रकार यदि वि– कार्बनिककरण को पर्याप्त समाधान के रूप में माना जाता है तो यह समान रूप से महत्वपूर्ण अन्य डी से ध्यान भटकाने के रूप में कार्य करेगा।

> कार्यकर्ता शिक्षाविद के रूप में हम क्या कर सकते हैं?

वैश्विक संकटों को सम्बोधित करने के लिए न्यूनकारी दृष्टिकोण का सबसे ध्यान देने योग्य स्वरुप राजनीतिक तकनीकी तंत्र का हालिया पुनरुत्थान है। जितना अधिक यह विफल होता है उतना ही अधिक सत्तावादी हो जाता है। नवाचार और अत्याधुनिक ज्ञान के केंद्र के रूप में विश्वविद्यालय अपनी स्वायत्ता कॉर्पोरेट उद्योग और व्यापार भागीदारों के लिए खो रहे हैं, जो मितव्यतता के इस युग में प्रायः उनके समर्थन का प्रमुख स्त्रोत हैं। मानविकी और सामाजिक विज्ञान (एचएएसएस) एक पहचान के संकट का सामना कर रहा है। इसे एक गैर न्यूनवादी संभाषण को खोजने की जरूरत है जिसमें एचएएसएस अपने खोए हुए ऐतिहासिक उद्देश्य को बहाल कर सके। प्रगतिशील विकल्पों के लिए मुक्त करने वाले प्रक्सिस पर ध्यान केंद्रित करने के लिए एक "आमूल परिवर्तनवादी विद्वता" को पुनः निर्मित करने की आवश्यकता है (जैसा कि *ट्रांस्फ़ॉर्मेटिव ग्लोबल स्टडीज की रुटलेज हैंडबुक* के लेखकों द्वारा प्रदर्शित किया गया है)।

अप्रभावी प्रौद्योगिकीतांत्रिक समाधानों के प्रत्युत्तर में, हमने हाल ही में स्व–प्रेरित सांप्रदायिक रचनात्मकताओं और जमीनी स्तर की परियोजनाओं के एक विशाल श्रंखला समूह में अधिक अर्थपूर्ण प्रणालीगत बदलाव के लिए विस्फोट देखा है। गहन सभ्यतात्मक परिवर्तन की ऐतिहासिक आवश्यकता को 5 डी आंदोलनों की बढ़ती संख्या से अच्छी तरह से समझा जा सकता है।

2020 के दशक को मानव इतिहास में सबसे नाजुक सदी में सबसे निर्णायक दशक माना जा सकता है जहां "असंभव की मांग करना" उभरती हुई क्रांतिकारी ताकतों के लिए एकमात्र "यथार्थवादी" विकल्प बन जाता है। तीव्र आर्थिक और पर्यावरणीय जैविक संकटों की विशेषता वाले वर्तमान संयोग संभवतः अप्रत्याशित असंतोष में अनुवादित होगा। हमारे युग में, हम ऐसी स्थिति में पहुंच गए हैं जहां सिद्धांत और वास्तविकता के मध्य विसंगतियों को जमीनी आमूल परिवर्तनवादी ताकतों से अंतर्दृष्टि प्राप्त किए बिना हल नहीं किया जा सकता है।

हालांकि ये ताकतें विविध, असंरचित और तेजी से विकसित होती हैं, जिससे उन्हें समझना मुश्किल हो जाता है। हाल ही में, महामारी प्रेरित लॉकडाउन और मंदी के कारण इन परिवर्तनकारी ताकतों को एक अप्रत्याशित अवसर मिला है जिससे वे व्यापक आबादी के साथ ऑनलाइन जुड़ाव के माध्यम से सामने आये हैं। अफसोस की बात है कि 5क परिदृश्य की मुक्तिगत क्षमताओं के बावजूद, यह एचएएसएस में अभी भी एक हाशिये का विषय है।

> लोक ज्ञान के सह–निर्माण की आवश्यकता

5डी के साथ हमारी सहभागिता में सबसे महत्वपूर्ण सवाल यह है कि विकल्पों के उभरते परिदृश्य के समावेशी तथापि गतिशील ज्ञान को कैसे "सह विकसित" किया जाए, ऐसा ज्ञान जो बदले में इन परिवर्तनकारी कर्ताओं और प्रथाओं को सशक्त बनाता है, और हमारी विद्वता को परिवर्तनकारी के रूप में पुनः निर्मित करने में सहायता करता है। यह मानने का कोई कारण नहीं है कि संकटों के तीव्र होने; का स्वतः परिणाम वैश्विक वाम के अनुत्पादक विभाजन का विध्वंस होगा, यह अपेक्षा कि 5 डी के अनगिनत रूपों के मध्य आकस्मिक अंतः क्रियाओं के बाजार से किसी तरह जादुई रूप से एक नया परिप्रेक्ष्य उत्पन्न होगा जो ग्रह से जीवन समाप्ति से पूर्व ही पूंजीवाद का अंत कर देगा। विडंबनात्मक रूप से यह अदृश्य हाथों और ट्रिकल डाउन कहानी के नव–शास्त्रीय मिथक से मेल खाते हैं।

वर्तमान संदर्भ में जहां पूंजी की प्राथमिकताओं द्वारा समुदाय के हितों, अधिकारों और जरूरतों को कमतर किया जाता है, यह स्थाई, आत्मनिर्भर, न्याय संगत और लोकतांत्रिक भविष्य के निर्माण से संबंधित प्रगतिशील सामाजिक– राजनीतिक प्रयासों के लिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि वे पूंजीवादी ज्ञानात्मक दीवारों का विरोध करें और उसे पलटने का प्रयास करें। एचएएसएस में स्वयं को प्रौद्योगिकी तंत्रात्मक सोच के समक्ष समर्पण किये बिना, सामाजिक सूचना विज्ञान में हालिया पद्धत्तिगत प्रगति को जमीनी स्वतंत्रता प्रेक्सिस को सशक्त बनाने के लिए जिम्मेदारी से काम में लिया जा सकता है। बड़े आंकड़ों की शक्ति को जमीनी स्तर पर आंदोलनों के साथ "नॉलेज कॉमन" को सह– निर्मित करने के लिए तैयार किया जा सकता है, जो कि पश्च–5 सी की इको–सभ्यताओं के लिए एक समावेशी संक्रमण को मार्गदर्शन और ऊर्जा दे सकता है। ■

सभी पत्राचार एस.ए. हामिद होसैनी को <hamed.hosseini@newcastle.edu.au> पर प्रेषित करें।

> "कोयानिसक्त्सी" से परे :

सभ्यता की पुनर्कल्पना करना

बैरी गिल्स, हेलसिंकी विश्वविद्यालय, फिनलैंड द्वारा

हमारी सभ्यता में शक्ति और सामाजिक संगठन के हावी आदर्शों को हमारे भविष्य में पूर्णतया पुनर्कल्पित और मौलिक रूप से बदल दिया जाना चाहिए।

दुनिया भर में हाल ही में बढ़ती टिप्पणीयों में चित्रित, वर्तमान संकट में एक उभरता हुआ दृष्टिकोण है, जिसमें क्षेत्रकरण को यह बताते हुए कि विश्व व्यवस्था और सभ्यता के वर्तमान स्वरूप ने मानवता और "प्रकृति" को एक बड़े संकट में ला दिया है, और यह कि इस नींव को आमूल रूप से परिवर्तन करने हेतु हमें कार्य करने चाहिए, अभिव्यक्त किया गया है। तीन सी – जलवायु, पूंजीवाद और कोविड–19 के संयोजन या "ट्रिपल संकट" ने इस संकट के मूल कारणों को दूर करने के लिए गति प्रदान की है।

> कोयानिसक्त्सी के समय में जीवन यापन

उत्तरी अमेरिका के होपी लोगों के पास हमारी वर्तमान स्थिति के लिए बहुत प्रासंगिक मिथक है: कोयानिसक्त्सी का मिथक, जिसे अक्सर "असंतुलित जीवन", "जीवन का वह रूप जो अस्तित्व में नहीं होना चाहिए" या "उन्मादी जीवन" के रूप में अनुवादित किया जाता है। इस मिथक में मनुष्य सभी जीवन के लिए संरक्षक हैं, और हमारा उद्देष्य जीवन के सभी रूपों के बीच संतुलन बनाए रखना है। ऐसा करने के लिए हमें स्वयं जीवन का ऐसा तरीका बनाए रखना चाहिए जो जीवन के अन्य सभी रूपों के साथ सामंजस्य स्थापित करता हो। हालांकि कोयानिसक्त्सी में मनुष्यों ने "अपना होश खो दिया है", और वे अपने ही कार्यों द्वारा लाए गए विनाश की खाई की ओर लक्ष्यहीन रूप से चल रहे हैं। इस तरह की संस्कृति जीवन की मौलिक एकता और अंतर्संबंध की अवहेलना करती है। यह समस्त जीवन की पवित्रता को भूल जाती है। यह अपने स्वयं के वास्तविक उद्देश्य को, और यह जीवन के अन्य रूपों के साथ मनुष्य की गहन निर्भरता को भूल जाती है। इसके कार्यकलाप "नासमझ" और विनाशकारी हैं। केवल एक गहरा आध्यात्मिक जागृति और सांस्कृतिक तथा भौतिक नवीनीकरण ही ऐसी संस्कृति के रुख को बदल सकता है और इसे और असंख्य अन्य जीवन रूपों को उस बड़े नुकसान और विनाश से बचा सकता है जो कोयानिसक्त्सी अपने साथ अनिवार्य रूप से लाएगा।

हम कोयानिसक्त्सी के समय में जी रहे हैं। हम "प्रगति", "आधुनिकता", "विकास" और "वैश्वीकरण" जैसी अवधारणा को पूरा करने के दायरे में सम्मोहित हैं। उन्होंने हमसे बेहतर भविष्य का वादा किया है। उन्होंने हमें भौतिक समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरक्षा, स्वतंत्रता के भावी युग का वादा किया है। हालाँकि, सच्चाई यह है कि उन्होंने उन ऐतिहासिक प्रक्रियाओं को छुपा दिया है जो इस वर्तमान वैश्विक संकट का कारण बने हैं।

"सभ्यताओं के पतन" और मानवता के लिए "अस्तित्वगत खतरों या चुनौतियां" का अध्ययन अब अकादमिक रूप से वैध और यहां तक कि "लोकप्रिय" हो रहा है। वह प्रघटना उस स्थिति का लक्षणात्मक है जिसमें हम खुद को पाते हैं: अर्थात हम, हमारी सभ्यता के "महान अंतःस्फोट", एक "विश्व प्रणाली संकट", एक "सामान्य

>>

संकट" के प्रभावी प्रकार से गुजर रहे हैं। इस "सामान्य संकट", "महान गिरावट" के कई कारणों की पहचान की जा सकती है, जो हमें सभ्यता के पतन के खतरे की भी धमकी देती है। जलवायु परिवर्तन बेशक इस महान संकट का केंद्रीय कारण है, लेकिन यह केवल एक ही नहीं है, और कई मायनों में, जलवायु परिवर्तन अपने आप में अत्यधिक मौलिक, अंतर्निहित और दीर्घकालिक ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का परिणाम है। इस महान संकट को प्रेरित करने वाली ऐतिहासिक प्रक्रियाओं में, धन का अत्यधिक संकेंद्रण (कुलीनता); श्रम और "प्रकृति" का अत्यधिक शोषण (अर्थात ,मानव श्रम और प्राकृतिक दुनिया से मूल्य का अति–निष्कर्षण जिससे प्रणालीगत एंट्रोपी में वृद्धि होती है); धन और पूंजी अधिशेष का परजीवी और परभक्षी संचयन तथा सामाजिक रूप से उपयोगी और उत्पादक बुनियादी ढांचे में "कम निवेश" और वस्तुकरण, बाजारीकरण और "आर्थिक वृद्धि" का एक व्यवस्थित तर्क/जुनून शामिल है।

शैक्षणिक विषय और वास्तविक अभ्यास, दोनों के ही रूप में, हमारे प्रमुख अर्थशास्त्र, ने इस भ्रम को बनाये रखा कि अर्थव्यवस्था का किसी भी तरह का कोई जैव भौतिक आधार अथवा सीमा नहीं है। पर्यावरण या पर्यावरण अर्थशास्त्र, मुख्यधारा अर्थशास्त्र का एक मामूली उप–क्षेत्र है, और यह मान्यता है कि प्रभावी आर्थिक व्यवस्था द्वारा वर्तमान में बनाई गई सभी पर्यावरणीय समस्याएं भविष्य में, मुख्य रूप से तकनीकी नवाचार और बाजार– अनुरूप सिद्धांतों और तंत्र के माध्यम से हल करने योग्य है। इस संकीर्ण और मूढ़ आशावादी विश्व दृष्टिकोण ने आने वाली पारिस्थितिकी तबाही और जलवायु क्षरण को टालने के लिए महत्वपूर्ण परिवर्तनों को सबसे शक्तिशाली आर्थिक और राजनीतिक कर्ताओं द्वारा संबोधित किए जाने में पहले ही दशकों तक अंतहीन संतोष, देरी और स्थगन में योगदान दिया है। यह मूढ़ आशावादी विश्वदृश्टि और "बाजार" की पूजा इस काल का प्रमुख विश्वास बन गई है तथा "नव उदारवाद", "वैश्वीकरण" और यहां तक कि "विकास" के वैश्विक नायकत्व विचार को जैसा समझा और व्यवहार में लिया गया है, के केंद्र में है।

संकट का अर्थ है टूटना। संकट का अर्थ है व्यवस्थागत विफलता। आज दुनिया में संकट का मतलब मानवता के लिए एक अस्तित्वगत खतरा हैः हमारी सभ्यता का "पतन" अथवा यहां तक कि उसका नष्ट हो जाना है, एक ऐसी सभ्यता जिसे तथाकथित रूप से वैश्वीकरण ने अप्रत्याशित रूप से से सफल बना दिया है।

> कोयानिसक्त्सी के पास समाधान समाधान है

समाधान क्या है? कोयानिसक्त्सी के पास हमारी पहेली का जवाब है। हमें अपनी सभ्यता, अपनी पूरी संस्कृति, आध्यात्मिक और भौतिक, दोनों के "गहन पुनः स्थापन" की आवश्यकता है। यह एक धारणा है जिसे मैंने 2020 में *ग्लोबलाइजेशनस* में प्रकाशित अपने लेख में विस्तृत किया है। हमें "सभ्यता को पुनरकल्पित" करने की आवश्यकता है। बुनियादी प्रारूप जो हमारी सभ्यता में शक्ति और सामाजिक संगठन के प्रमुख प्रकारों का गठन करते हैंः अर्थात राज्य, पूंजी और नगरों को हमारे भविष्य में गहराई से पुनरकल्पित और आमूल रूप से परिवर्तित किया जाना चाहिए। मानवता को जीवन के जाल में अपनी अंतर्निहितता को स्वीकार करना चाहिए और विश्व सीमाओं, पृथ्वी प्रणाली की गतिशीलता, जैव भौतिक नींव एवं जैव–भौतिकीय सीमाओं, पारिस्थितिकी और जलवायु परिवर्तन की सीमारेखा और अंतिम छोर बिंदुओं की वास्तविकता को पूरी तरह से पहचानना चाहिए, जो वास्तव में जीवन की एकीकृत वैश्विक प्रणाली है। हमारी भावी कार्यवाही समस्त विशाल और सुंदरता के साथ पृथ्वी पर जीवन की "महान बहाली" होनी चाहिए। इस प्रकार इसमें वैश्विक वस्तुकरण, बाजारीकरण और आर्थिक विकास के जुनून के "महान प्रत्यावर्तन" का समावेश भी होना चाहिए जो हमारे सामूहिक भौतिक जीवन पर हावी हो रहा है। भौतिक और सामाजिक दोनों संसार का "पुनर्समान्यकरण" सभ्यता के इस महान परिवर्तन के केंद्र में होगा। घरेलू और वैश्विक शांति दोनों ही, इस तरह एक नई और 'पुनरकल्पित' सभ्यता में एक अनिवार्य तत्व होगी। पिछली कुछ शताब्दियों के अंधकार का युग, जो साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, नव–उपनिवेशवाद, नस्लवाद और पितृसत्तात्मक शक्ति के साथ व्याप्त था, अब समाप्त होना चाहिए।

इतिहास बाद में लिखा जाता है, लेकिन भविष्य अभी लिखा जा रहा है। वर्तमान वैश्विक प्रणालीगत संकट के संदर्भ में उभर रही नयी विश्वदृष्टि वास्तव में एक बहुत प्राचीन विश्वदृष्टि के साथ गुंजायमान है। नष्ट हुआ पूर्व कोविड–19 "सामान्य" को स्थिर बनाने का विचार और कुछ नहीं बल्कि एक महान भ्रम है।

"सामान्यता" की तरफ लौटने का विचार अनिवार्य रूप से विनाशकारी विचार है। हमारी सभ्यता के बुनियादी रूपों का आमूल परिवर्तन ही भावी आपदाओं को रोकने के लिए पर्याप्त होगा। कई का, कई के द्वारा, और कई के लिए कई परिवर्तनवादी व्यवहार ही हमारे सामूहिक अस्तित्व के लिए एकमात्र यथार्थवादी वादे और आशा का स्त्रोत रखता है। अब और कोई बहाना नहीं हो सकता और पीछे मुड़ने का कोई विकल्प नहीं है। ■

सभी पत्राचार बेरी गिल्स को <bkeithgills@gmail.com> पर प्रेषित करें।

> रस्ताफ़री और वेस्ट इंडियन पुनर्निर्माण

स्कॉट टिमके, वेस्टइंडीज विश्वविद्यालय, सेंट ऑगस्टिन, त्रिनिदाद और टोबैगो और **शेलिन गोम्स**, वेस्टइंडीज विश्वविद्यालय, सेंट ऑगस्टिन, त्रिनिदाद और टोबैगो तथा प्रवास (आरसी 31) के समाजषास्त्र पर आइएसए की अनुसंधान समिति के सदस्य द्वारा

2009 में इथोपिया के शाशमने में रास्तफ़ारी उपस्थिति का संकेत देता एक चिन्ह। श्रेयः शेलिन गोम्स

वर्ष 1930 में रास तफरी मकोनन का महामहिम सम्राट हेली सेलासी प्रथम के रूप में शाही राज्याभिषेक, अंशतः इथोपिया के जीवन में एक नए युग का जश्न मनाते हुए गौरव का एक सिनेमाई प्रदर्शन था। 12500 किलोमीटर दूर, कैरेबियन में ब्रिटिश राजशाही द्वारा शासित गरीब अश्वेत जमैकावासियों ने इस प्रदर्शन का समाचार फुटेज देखा। उन्होंने पहली बार एक अश्वेत राजा को देखा था।

अभिलेखिय रिकॉर्ड बताते हैं कि इसके तुरंत बाद जमाईकावासियों ने इथोपिया के बारे में अधिक से अधिक जानने के लिए सूचनाओं का आदान प्रदान किया और समाचार पत्रों एवं पत्र–पत्रिकाओं को पढ़ा। अफ्रीका के इस शक्तिशाली प्रतीकवाद को मार्कस गर्वे ने अपने नाटक, *द कोरोनेशन ऑफ द किंग एंड क्वीन ऑफ अफ्रीका* में कैद किया था। यह अपेक्षित दृष्टि की निसंदेह नस्लीय पूंजीवाद की भयावहता की एक जैविक प्रतिक्रिया थी।

> "आधुनिकता की प्रति – संस्कृति"

अश्वेत अनुभव के अंतर्गत से लिखे जाने पर पूंजीवाद का इतिहास बहुत अधिक अलग दिखता है। यद्यपि अधूरा और समालोचना से परे ना होकर, रस्ताफरियन, जिन्हें पॉल गिलरॉय "आधुनिकता की प्रति संस्कृति" कहते हैं, के द्योतक हैं। त्रिनिदाद के सी.एल.आर जेम्स और क्लाउडिया जोंस ने यूरोपीय पूंजीवाद के विकास के लिए वेस्टइंडीज की केंद्रीयता को स्पष्ट करने के लिए आधुनिकता के रूढ़िवादी विश्लेषण को उलट दिया। वैसे ही रस्ताफ़री पहले से देशज शाब्दिक संप्रत्यय में लिपटे उद्धारक परियोजनाओं के लिए प्रवृत्ति का एक प्रतीक है। यह इस विचार का उलट है कि सामाजिक परिवर्तन और विकास, संस्थानों या राज्य द्वारा निर्देशित परियोजनाओं द्वारा सर्वोत्तम रूप से संचालित होता है।

वास्तव में, रस्तफारी विश्व विज्ञान इस बात का एक अच्छा उदाहरण है कि कैसे अधीनस्थ व्यक्तियों, जिन्होंने जीवन के नए तरीकों की कल्पना की, फिर उसी के अनुसार संघर्ष किया। इस प्रकार के कैरेबियन आधारित और रस्तफारी कल्पनाशील पुनर्निर्माण, जिन्होंने कैरेबियन नृविज्ञान और सामाजिक सिद्धांतों के उद्विकास को लंबे समय से प्रभावित किया है, इस सदी के लिए एक वि–औपनिवेशिक समाजशास्त्र को प्रेरित करने में मदद कर सकते हैं।

> वि–औपनिवेशिक समाजशास्त्र के तत्व

यह दिखाने के लिए कि विषय को हस्तांतरित किया जा सकता है, आइए हम जन आंदोलनों से प्रारम्भ करते हैं। पश्च–औपनिवेशिक

>>

वेस्ट इंडियन सामाजिक सिद्धांतवेत्ताओं के साथ 2008 और 2015 के बीच कई फील्ड वर्क यात्राओं के दौरान एकत्र किए गए आंकड़ों के संयोजन के माध्यम से, हम रस्तफारी आध्यात्मिक व्यवहार को जैविक बुद्धिजीवियों में स्थित उत्पाद के रूप में समझ पैदा कर पाए हैं, जो अपनी स्थितियों और रोजमर्रा की जिंदगी के लिए एक समाजशास्त्रीय स्पष्टीकरण प्रदान करने की खोज में है। निसंदेह अपने मूल गठन में रस्ताफ़री "कॉस्मोपॉलिटिक्स" सामाजिक दुनिया का एक समृद्ध विवरण प्रदान करता है, जैसा वॉल्टर रोडनी ने रस्ताफ़री में पहचाना था, जिसके साथ वे औपनिवेशिक जमैका से "जमीनी" स्तर पर जुड़े थे।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के दौरान, संगठित रस्ताफ़री की लहरें कैरेबियन से शाशमने, इथोपिया तक प्रवासित हुई। हेले सेलासी प्रथम द्वारा प्रवासी अफ्रीकियों के लिए चिन्हित भूमि पर बसा यह शहरी समुदाय, संपूर्ण–अफ्रीकी सामाजिक कल्पनात्मकता को किस प्रकार साबित किया जा सकता है, के एक ताकतवर राजनीतिक अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। रस्ताफ़री के लिए इथोपिया एक ऐसा स्थान भी है जो मानव जाति की उत्पत्ति के साथ–साथ ज़िओन का दिव्य और पवित्र स्थल है। तदनुसार, बसावट को "स्वदेश आगमन" कहा जाता है, जो हमें स्व–पुनर्निर्माण और उनकी शर्तों पर सामाजिक परिवर्तन के लिए एक समवर्ती एजेंडे का संकेत देता है।

इस पवित्र स्थल को देखते हुए रस्ताफ़री, शाशमने की तीर्थ यात्रा करते रहते हैं और इसके अतिरिक्त स्थानीय समुदाय का आर्थिक रूप से समर्थन करते हैं। यह समर्थन विशेष रूप से इथोपिया में रस्ताफ़री मूल्यों के अस्तित्व, सामाजिक सुधार और उनके पुनरुत्पादन तथा धार्मिक समुदाय की पहचान को बढ़ाने में महत्वपूर्ण है। गरिमा की बहाली और दिव्यता से उसके संबंध को उपनिवेशवाद के दौरान अधीनस्थ के लंबे अनुभव की भयावहता के चलते देखा जाता है। यह "पूंजीवाद और उपनिवेशवाद" संबंध महानगर लंदन के परिप्रेक्ष्य से नहीं लिखा गया है बल्कि किंग्सटन से शाशमने जाने वाले व्यक्तियों के सन्दर्भ में लिखा गया है।

> रस्ताफ़री कॉस्मोपॉलिटिक्स

रस्ताफ़री न केवल इथोपिया को ईसाई धर्म का दीर्घकालिक गढ़ मानते हैं, बल्कि वे इसे एकमात्र अफ्रीकी क्षेत्र के रूप में सराहते हैं, जो यूरोपीय शक्तियों द्वारा औपचारिक रूप से कभी उपनिवेश नहीं बनाया गया है। सांस्कृतिक प्रतिरोध के रूप में अफ्रीका के पहले से मौजूद आदर्शकरण को आगे बढ़ाते हुए, रस्ताफ़री यह विश्वास करने लगे कि सम्राट हेले सेलासी प्रथम दिव्य थे। यह विश्वास कैरेबियाई लोगों का बाइबिल के बारे में ज्ञान से बल पाता है। निश्चित रूप से रस्ताफरियनवाद पश्चिमी अफ्रीकी युत्पन्न धार्मिक प्रथाओं, जो मध्य मार्ग से बच पाईं, का भी एक परिणाम है। लेकिन यह भी सच है कि जैसे ही धार्मिक संगठनों ने बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दिनों में पूरे जमायका में स्कूल खोलें, बाईबिलिय कल्पना आम लोगों के बीच प्रसिद्ध हो गई।

धर्मनिरपेक्ष आयोजन के बजाय, यह सिद्धांतों की पुनर्व्याख्या के माध्यम से था कि श्वेत वर्चस्व के विरोध में सामूहिक प्रतिरोध ने आकार लिया। इस पुनर्व्याख्या में हम कैरीबियन में औपनिवेशिक उत्पीड़न का समर्थन करने वाली ईसाई प्रथाओं के वि–उपनिवेशीकरण के प्रारंभिक जैव प्रयास पाते हैं।

इस ढांचे के भीतर रस्ताफ़री, एक आम मानवता को गले लगाते हैं, जिनमें "विश्वासी" और जैसा वे कहते हैं, वे जो रस्ताफ़री नहीं बने हैं, सम्मिलित हैं। इस प्रतिक्रिया को एक उभरते हुए दक्षिणी सर्वदेशीयवाद के रूप में माना जा सकता है, जो सांस्कृतिक बहुलता की ओर खुलेपन के दृष्टिकोण का पालन करता है। हमारा सुझाव है कि रस्ताफ़री "खुलापन" अंतर महाद्वीपीय बागानी अर्थव्यवस्था, इसके पदानुक्रम, बहु–सांस्कृतिक वातावरण और स्व–निर्माण के कल्पनात्मक कृतियों से बनी एक कैरेबियाई ऐतिहासिक जागरूकता के जनमतता पर टिका है। इस तरह यह श्वेत वर्चस्व को सीधे चुनौती है।

किसी भी तरह से रस्ताफ़री संपूर्ण–अफ्रीकीवाद की प्रथम लोकप्रिय अभिव्यक्ति नहीं थे – अन्य के मध्य पॉल गिलराय, हिलेरी बेकल्स और रॉबर्ट ए. हिल ने पूर्ववर्ती प्रयासों का उल्लेख किया गया है। फिर भी उनकी रोजमर्रा की प्रथाएं जिसे हम "साधारण एकजुटता" कहते हैं, अनुभवात्मक और वैचारिक जांच को समृद्ध करने में मददगार साबित हो सकती है। साधारण एकजुटता, दक्षिणी सर्वदेशीयता पर आधारित अश्वेत अनुभवों के ढांचे से समाजशास्त्रीय परिकल्पना, कैसी नजर आएगी इसके आसपास प्रश्न उठाती है।

साधारण एकजुटता के एक उदाहरण के रूप में रस्ताफ़री "कॉस्मोपॉलिटिक्स" समाजशास्त्रियों को उन तरीकों को उजागर करने में मदद कर सकती है जिनमें स्थानीय परिदृश्य वैश्विक प्रक्रियाओं के साथ जुड़ते हैं। इन मार्गों द्वारा सुझाए समृद्ध विवरण का अनुसरण करने से हमें लगता हैं 21वीं सदी की स्थाई और उभरती हुई और असमानताओं की अवधारणात्मक स्थिति को भली प्रकार विकेंद्रित, वि–औपनिवेशिक, विषयक अनुशासन की ओर योगदान कर समाजशास्त्र को पुनर्जीवित करने के लिए अश्वेत अनुभवों को आकर्षित करने की क्षमता है। इस तरह वेस्ट इंडियन सामाजिक सिद्धांत की उद्धारक "जमीनी" क्षमता आगे बढ़ती है। ■

सभी पत्राचार स्कॉट टिमके को <stimcke@gmail.com> और
शेलिन गोम्ज को <sshelene.gomes@sta.uwi.edu> पर प्रेषित करें।

> श्रीलंकाई समाजशास्त्र

वैश्विक और स्थानीय संदर्भों

सिरि हेटीगे, कोलंबो विश्वविद्यालय, श्रीलंका और आईएसए की शिक्षा के समाजशास्त्र (आरसी 04) गरीबी, सामाजिक कल्याण और सामाजिक नीति (आरसी 19) तथा युवा समाजशास्त्र (आरसी 34) की अनुसंधान समितियों के सदस्य द्वारा

1921 में सीलोन विश्वविद्यालय महाविद्यालय। श्रेयः क्रिएटिव कॉमन्स।

जैसा की सर्वविदित है, कई गैर–पश्चिमी समाज 16वीं शताब्दी की शुरुआत में पश्चिमी औपनिवेशिक वर्चस्व के अधीनस्थ थे। श्रीलंका, जिसे पहले हिंद महासागर में एक छोटे से द्वीप, सीलोन के रूप में जाना जाता था, 1505 से लेकर 1948 में ब्रिटिशों से अपनी स्वतंत्रता तक पुर्तगाली, डच और ब्रिटिश नामक तीन क्रमिक औपनिवेशिक शक्तियों के वर्चस्व के तहत था। उपनिवेशवाद के तहत, खासकर ब्रिटिश शासन के 150 वर्षों के दौरान, देश व्यापक परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजरा। अन्य बातों के अलावा, इस चर्चा के लिए सबसे अधिक प्रासंगिक इसके शैक्षिक परिदृश्य में बदलाव है, जो वर्चस्वशाली धार्मिक संस्थानों द्वारा प्रारंभिक स्कूल व्यवस्था से एक अधिक विविध सामान्य शिक्षा प्रणाली की ओर परिवर्तन था। फिर भी, औपनिवेशिक शासन के अंत तक आधुनिक विश्वविद्यालय शिक्षा की कोई प्रणाली शुरू नहीं की गई थी, जिससे इस प्रकार की उच्च शिक्षा प्राप्ति के इच्छुक स्थानीय कुलीन युवाओं के लिए विदेशी यात्राएं आवश्यक थी। समाजशास्त्र सहित विभिन्न विषय क्षेत्रों में, जो पहले से ही यूरोपियन और अन्य विश्वविद्यालयों में व्यापक रूप से पढ़ाए जाते थे, स्थानीय स्तर पर विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त करने के लिए ऊर्ध्वगामी रूप से गतिशील मूल निवासियों के लिए कोई अवसर नहीं थे।

> विश्वविद्यालय शिक्षा का विस्तार

चूँकि विश्वविद्यालय शिक्षा काफी हद तक एक उत्तर आधुनिक घटना थी, इसलिए 1940 के दशक में समाजशास्त्र के शिक्षण को एक स्थानीय विश्वविद्यालय की स्थापना तक इंतजार करना पड़ा। विश्वविद्यालय शिक्षा की बढ़ती मांग के साथ बाद के दशकों में कई नए विश्वविद्यालय स्थापित किए गए। फिर भी, आजादी के दो दशक से अधिक समय के बाद जब तक कोलंबो में समाजशास्त्र का दूसरा विभाग स्थापित किया गया, 1969 तक समाजशास्त्र का शिक्षण पैराडेनिया विश्वविद्यालय तक ही सीमित रहा।

यह महत्वपूर्ण है कि, 1950 के दशक के प्रारम्भ में, पैराडेनिया विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद, वहाँ एक नवनियुक्त अध्यक्ष के तहत समाजशास्त्र का विभाग स्थापित किया गया था। यहाँ प्रारम्भ में, संयुक्त राज्य अमेरिका के समाजशास्त्री, प्रोफेसर ब्रायस रायन अध्यक्ष थे। चूँकि शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी था, अतः अंग्रेजी में उपलब्ध समाजशास्त्रीय ग्रंथों का उपयोग करना

>>

संभव था, जो व्यापक रूप से पश्चिमी देशों और अन्य जगहों पर उपयोग में लाए जाते थे। फिर अगले कुछ वर्षों में महत्वपूर्ण उत्तर औपनिवेशिक परिवर्तनों के चलते स्थिति में बदलाव आना प्रारम्भ हुआ। स्वतंत्रता से एक दशक पूर्व से अधिक समय से स्थापित सरकार की लोकतांत्रिक प्रणाली ने देशी सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थानों के वि–उपनिवेशीकरण और पुनरुद्धार की मांग को व्यक्त करने के लिए उपनिवेश विरोधी आंदोलनों के अवसर पैदा किये। आजादी के ठीक आठ साल बाद, 1956 में अंग्रेजी से देशज भाषाओं में शिक्षा के माध्यम में परिवर्तन के परिणामस्वरूप दूरगामी परिणामों के साथ सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया गतिमान हुई है। नगरीय मूलनिवासी अभिजनों सहित आंग्ल समुदायों के कई सदस्यों के लगातार पलायन के परिणामस्वरूप देश में महत्वपूर्ण प्रतिभा पलायन हुआ।

1950 के मध्य में कोलंबो के उप नगरों में दो प्रमुख बौद्ध मठों का दो राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में रूपांतरण के परिणामस्वरूप, अन्य परिणामों के साथ विश्वविद्यालय शिक्षा का महत्व पूर्ण विस्तार हुआ।1950 के दशक से राज्य के नेतृत्व वाले विकास के लिए राज्य क्षेत्र के विस्तार के कारण इस प्रवृत्ति को अगले दशकों में जारी रखा गया और देश के विभिन्न हिस्सों में कई और विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई जिससे उत्तर औपनिवेशिक समाज में लंबवत और क्षेत्रीय असमानता की विशेषता लिए, उच्च शिक्षा और उच्च सामाजिक गतिशीलता के लिए अधिक अवसर पैदा हुए। आर्थिक विकास के मौजूदा निम्न स्तर को देखते हुए विश्वविद्यालय शिक्षा के इस निरंतर विस्तार के परिणामस्वरुप उच्च स्तर की स्नातक बेरोजगारी ने जन्म लिया।

> एक एकांतिक समाजशास्त्र

समय के साथ, अंग्रेजी से देशी भाषाओं में परिवर्तन ने अधिकांश एकभाषी विद्यार्थियों को अंग्रेजी मूल पाठ के उपयोग की दक्षता से वंचित कर दिया। यद्यपि बाद में प्रमुख समाजशास्त्र ग्रंथों के अनुवाद को मूल भाषाओं में प्रकाशित करने के लिए कुछ संस्थागत व्यवस्थाएं बनाई गई थी, परंतु संसाधनों की कमी और अन्य बाधाओं ने इस व्यवस्था की निरंतरता को रोक दिया। इस प्रकार, अधिकांश छात्र स्थानीय भाषाओं में बड़े पैमाने पर व्याख्यान नोट्स तक ही सीमित रह गए। अगले कुछ दशकों में, अधिकांश छात्र व्यापक रूप से अन्यत्र उपयोग में लाए जाने वाले मूल समाजशास्त्रीय ग्रंथों से विलग हो गए। फिर भी अधिकांश समाजशास्त्र स्नातकों ने अपने प्रशिक्षण की गुणवत्ता के बावजूद राज्य के संस्थानों में विविध कार्यकर्ताओं के रूप में रोजगार पाया। जहाँ, कुछ शिक्षाविदों ने स्नातकोत्तर प्रशिक्षण और विनिमय यात्राओं के माध्यम से विदेशी विश्वविद्यालयों के साथ संपर्क बनाए रखना जारी रखा, अन्य अंतरराष्ट्रीय अकादमिक मुलाकातें जैसे अकादमी बैठकों में भाग लेना या मानक शैक्षणिक पत्रिकाओं में अपने आलेख प्रकाशित करना इनसे असंगत बने रहे। ऊपर वर्णित रुझान आज तक के समय में बरकरार है। प्रथम विश्वविद्यालय के पहले समाजशास्त्र श्रीलंकाई प्रोफेसर, राल्फ पेइरिस के नेतृत्व में 1980 के दशक में स्थापित नेशनल एसोसिएशन ऑफ सोशियोलॉजी आज भी सक्रिय है परंतु वह कुछ स्थानीय विश्वविद्यालयों के शिक्षाविदों के अल्पसंख्यक समूह को ही आकर्षित करती है। इसके अलावा बहुत कम श्रीलंकाई समाजशास्त्री अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्र संघ के सदस्य रहे हैं। क्षेत्र में समाजशास्त्रियों की अधिकांश संख्या आईएसए और राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय संघों से जुडी नहीं है। फिर भी, वे शिक्षण में सक्रिय हैं, स्थानीय मुद्दों पर शोध करते हैं और स्थानीय रूप से प्रकाशित पत्रिकाओं में आलेख लिखते हैं, जबकि अन्य स्थानीय विश्वविद्यालयों के स्नातक अधिकतर सरकारी रोजगार प्राप्त करते हैं।

ऊपर से यह स्पष्ट होता है कि उत्तर औपनिवेशिक श्रीलंका में उपनिवेशवाद–विरोधी राष्ट्रवाद की राजनीतिक अर्थव्यवस्था ने अन्यत्र अकादमिक समुदायों से स्वतंत्र, समाजशास्त्र के शिक्षण और अनुसंधान के परिक्षेत्रों को जारी रखने की सुविधा प्रदान की है। चाहे ऐसा ग्लोबल नॉर्थ या बाकी ग्लोबल साउथ में निजी शिक्षा के वैश्वीकरण की एक प्रक्रिया के बावजूद है, जिसने वैकल्पिक शिक्षा और कैरियर के अवसरों को खोजने के लिए सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली के बाहर कईयों को सक्षम किया है। यह दूसरा समूह है, जो अक्सर अधिक संसाधनयुक्त पृष्ठभूमि से आता है जो राष्ट्रीय सीमाओं को पार करने वाले निजी शिक्षा सर्किटों के माध्यम से परिसंचरण की प्रक्रिया से जुड़ा रहता है। फिर भी अधिकांश बाद वाले, समाजशास्त्र सहित अन्य उदार कलाओं में ना होकर, एसटीईएम शिक्षा के क्षेत्र में प्रवृत्त हैं।

औपनिवेशिक शासन के दौरान और बाद के परिवर्तनों से श्रीलंका के समाजशास्त्र का स्पष्ट रूप से विकास हुआ है। यह ज्ञान के समाजशास्त्र के चारों ओर अकादमिक संभाषण से अच्छी तरह मेल खाता है, जिसमें शास्त्रीय और हाल के सामाजिक सिद्धांतकारों द्वारा योगदान दिया गया है, विशेष रूप से अन्य के मध्य, कार्ल मार्क्स (1844), मैक्स वेबर (1947), मैक्स शेलर (1960), विल्हेल्म डिल्थे (1958), कार्ल मानहैम (1936), नोबेर्ट एलिअस (1956), रॉबर्टमर्टन (1957), पीटर बर्जर और थॉमस लुकमैन (1966) महत्वपूर्ण है। समय के साथ देश में विकसित सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ द्वारा ज्ञान के उत्पादन और प्रसार की प्रक्रियाओं को आकार दिया गया है। अंतरराष्ट्रीय समाजशास्त्र और श्रीलंकाई समाजशास्त्र के बीच वर्तमान कमजोर संबंध उन स्थितियों का प्रतिबिंब है जिसके तहत श्रीलंका में समाजशास्त्री अपने विशिष्ट सामाजिक–सांस्कृतिक और संस्थागत परिदृश्य में अपना कार्य करते हैं। ■

सभी पत्राचार सिरि हेटीगे को
<hettigesiri@gmail.com> पर प्रेषित करें।

> श्रीलंकाई समाजशास्त्र : समय के पार एक झलक

शुभांगी एम.के. हेरथ, कोलंबो विश्वविद्यालय, श्रीलंका द्वारा

श्रीलंकाई समाजशास्त्र का विकास जाहिर तौर पर समाजशास्त्र में स्पष्ट परंपरा का पालन नहीं करता, जैसा कि यूरोप या अमेरिका में प्रचलित है। यह समाजशास्त्र और मानवशास्त्र का एक उच्च मिश्रण है, जिसमें मानवशास्त्र की ओर महत्वपूर्ण झुकाव है। इसके दो कारण स्पष्ट हैं; एक यह कि श्रीलंका ब्रिटिश उपनिवेश था जहां इसकी विश्वविद्यालयी शिक्षा ब्रिटिश शिक्षकों द्वारा स्थापित की गई थी, जिसमें ब्रिटिश विश्वविद्यालय प्रणाली के मॉडल के अनुगमन अनुसार मानवशास्त्र सामाजिक विज्ञान में एक उन्नतिशील विषय था। दूसरा यह है कि देश पहले से ही मिशनरियों और यात्रियों के लिए अद्वितीय सौंदर्य, इतिहास और सामाजिक प्रणालियों की पेशकश कर रूचि का केंद्र था; मानवशास्त्रीय दृष्टि से युक्त किसी भी विद्वान के लिए श्रीलंकाई समाज और संस्कृति ने एक समृद्ध प्रयोगशाला की पेशकश की।

यद्यपि विश्वविद्यालय स्तर पर एक विषय के रूप में शिक्षण की शुरुआत पैराडेनिया विश्वविद्यालय (श्रीलंका में पहला पूर्ण आवासीय विश्वविद्यालय) में 1947 में हुई। शिक्षण और अनुसंधान के लिए कुछ प्रमुख ब्रिटिश और यूरोपीय समाजशास्त्रियों और मानवशास्त्रियों के योगदान ने श्रीलंकाई समाजशास्त्र (और/अथवा मानवशास्त्र) के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कुछ प्रख्यात प्रथम और द्वितीय पीढ़ी के विद्वान अभी भी सक्रिय हैं जिन्होंने अमूल्य समाजशास्त्रीय कार्य का उत्पादन कर इस क्षेत्र को समृद्ध बनाया है। उनमें से कुछ ने मुख्यधारा के मानव विज्ञानी के रूप में कार्य करना जारी रखा है। समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के बीच की सीमा का प्रतिच्छेदन आज भी श्रीलंकाई समाजशास्त्र की एक उल्लेखनीय विशेषता प्रतीत होता है।

> "श्रीलंका के समाजशास्त्र" का उद्विकास

पिछले 6 से 7 दशकों में दिखाई देने वाले अधिकांश समाजशास्त्रीय कार्य स्थानीय अध्ययन के रूप में या तो वृहत समाजशास्त्रीय सैद्धांतिक बहस से जुड़े हैं अथवा सूक्ष्म अध्ययन का सहारा ले रहे हैं, अथवा अगर मैं, रॉबर्ट मर्टन (1968) की शब्दावली का उपयोग करूं, वे "मध्यम–श्रेणी सिद्धांतों" की सीमा में विद्यमान हैं। प्रथम और द्वितीय पीढ़ी के कई समाजशास्त्रियों ने बहुत जागरूक रूप से समाजशास्त्रीय सिद्धांत के मौजूदा अंतरराष्ट्रीय निकाय पर अपने कार्य को आधारित किया है और वे उनके प्रयोग, परीक्षण और एक सैद्धांतिक स्तर पर पूछताछ में संलग्न हैं, जिसने "श्रीलंका के समाजशास्त्र" में उल्लेखनीय योगदान दिया है। एडमंड लीच (1961) जिन्होंने पैराडेनिया विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग में कार्य किया और उन्होंने "अर्थव्यवस्था के महा–संरचनात्मक प्रभुत्व" पर चल रही बहस में योगदान दिया या टिस्का फर्नांडो (1972) का 1971 में श्रीलंका में युवा विद्रोह पर कार्य जिसने विलफ्रेड परेटो के कार्य "ट्रांसफॉरमेशन ऑफ़ एलिट" के ढांचे में इस घटना का अध्ययन किया, अथवा लकसीरी जयसूर्या (2000) का नव–उदारवाद और कल्याणकारी नीति पर योगदान अन्य कई महत्वपूर्ण योगदानो में से कुछ हैं, जो श्रीलंकाई समाजशास्त्र के अंतर्गत गहन सैद्धांतिक कार्य की परंपरा में आते हैं। बाद के श्रीलंकाई समाजशास्त्रियों द्वारा किए गए योगदानो की जांच करने पर यह प्रतीत होता है कि श्रीलंका में परिवर्तित होती सामाजिक प्रघटनाओं जैसे जाति और वर्ग, कृषक संबंध, राजनीतिक व्यवस्था, लिंग संबंध, धर्म और संस्कृति, के साथ साथ प्रवास तथा पारिवारिक नेटवर्क आदि पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया है। हाल के वर्षों में उभरते और प्रचलित सामाजिक मुद्दे जो व्यक्ति समाज और विभिन्न सामाजिक समूहों पर गंभीर प्रभाव डालते हैं, की ओर ध्यान केंद्रित करने में स्पष्ट बदलाव दृष्टिगोचर है। पिछले पांच दशकों के दौरान, सामाजिक मुद्दों के इस समाजशास्त्र ने खुद को अकादमिक और सामान्य पाठक दोनों के बीच "श्रीलंकाई समाजशास्त्र" के रूप में स्थापित किया है।

> एक "सामाजिक मुद्दों का समाजशास्त्र"

इस विशिष्ट "सामाजिक मुद्दों के समाजशास्त्र" के अंतर्गत आने वाले अधिकांश कार्य प्रारंभिक अमेरिकी समाजशास्त्र के दौरान शुरू की गई समाजशास्त्रीय परंपरा का पालन करते प्रतीत होते हैं, उदाहरण के लिए डब्ल्यू. एफ़ वाइट की स्ट्रीट कॉर्नर सोसाइटी (1943) या फ्रेडरिक थ्रेशर की द गैंग (1927) या फ्लोरियन जिंनकी और डब्लू. आई. थॉमस की *द पोलिश पेसन्ट इन यूरोप एंड अमेरिका* (1918) जिनमें सभी ने यूरोपीय सैद्धांतिक समाजशास्त्र अथवा मजबूत दार्शनिक नीव पर आधारित मध्य –बीसवीं सदी के अमेरिकी समाजशास्त्र के बजाय स्थानीय स्तर पर सूक्ष्म सामाजिक मुद्दों पर आधारित सैद्धांतिक संभाषण के विकास में योगदान दिया। आज श्रीलंका में प्रकाशित समाजशास्त्रीय कार्य का एक बड़ा हिस्सा गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों स्तरों पर व्यापक क्षेत्र– कार्य के माध्यम से एकत्र किए गए आंकड़ों पर आधारित है, जो आज श्रीलंकाई समाज में उभरते विभिन्न मुद्दों पर केंद्रित है। हालांकि, पूर्णतया सैद्धांतिक आधार से रहित ना होकर भी इसमें अक्सर

>>

"पिछले पांच दशकों में, शैक्षणिक हलकों एवं सामान्य पाठकों के मध्य सामाजिक मुद्दों के समाजशास्त्र ने स्वयं को 'श्रीलंका समाजशास्त्र' के रूप में स्थापित लिया है।"

सैद्धांतिक कठोरता और वैचारिक मजबूती का अभाव होता है जो विद्वतापूर्ण कार्य से अपेक्षित है। इस स्थिति ने समाजशास्त्रीय साहित्य के विशाल निकाय का उत्पादन किया है जो लगभग "पत्रकारिता समाजशास्त्र" की शैली का प्रतिनिधित्व करता है। फिर भी, यह कहना आवश्यक है कि आम जनता के बीच इस तरह के अध्ययनों की लोकप्रियता, विशेष रूप से क्योंकि वे पाठक को गंभीर सैद्धांतिक बहस में नहीं उलझाते हैं, कम करके नहीं आकी जा सकती है क्योंकि यह समाजशास्त्रीय कार्यों के लिए व्यापक रूप से जनता का ध्यान आकर्षित करते हैं।

श्रीलंका के अधिकांश विश्वविद्यालय आज समाजशास्त्र पढ़ाने में संलग्न है; हालांकि शिक्षण के स्तर के साथ–साथ विषय–वस्तु के केंद्रण में एक उल्लेखनीय भिन्नता विद्यमान है। सामाजिक प्रक्रियाओं के परिणाम जिनमें 1956 का राज्य भाषा नीति में परिवर्तन (जिसने बहुसंख्यक आबादी की भाषा, सिंहला को एकमात्र राज्य भाषा बना दिया, अल्पसंख्यक आबादी की भाषा तमिल को तथा देश में उपयोग होने वाली एकमात्र अंतरराष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी को कोई मान्यता दिए बिना), फलस्वरुप तीव्र प्रतिभा पलायन और अंग्रेजी से मातृभाषाओं में स्कूल प्रणाली में शिक्षा के माध्यम में परिवर्तन शामिल हैं। इसमें नई पीढ़ी को अंतरराष्ट्रीय भाषा सीखने और वैश्विक ज्ञान तक पहुंच के अवसर से वंचित कर दिया, जो समाजशास्त्रीय ज्ञान के उत्पादन में अभी तक नजर आता है। फिर भी, समाज में होते भारी संस्थागत और संरचनात्मक परिवर्तन और लोगों द्वारा रोजमर्रा की वास्तविकता का मुकाबला करने के लिए अपनाई गई कई रणनीतियां के मद्देनजर, निसंदेह समाजशास्त्रीय कार्यों के उभरते निकाय में व्याप्त विविधता निश्चित रूप से प्रेरणादायक है।

हालांकि, प्रश्न यह है कि–"क्या रोजमर्रा के जीवन के समाजशास्त्र से संबंधित कार्य के निकाय को 'समाजशास्त्र' माना जा सकता है?" मैक्स वेबर अपने *साइंस एस अ वोकेशन* (1919) में लिखते हैं, "आजकल युवाओं के हलकों में व्यापक धारणा है कि विज्ञान एक गणना बन गया है [...] जिसमें केवल बुद्धि शामिल है, ना कि व्यक्ति का दिल और आत्मा।" समाजशास्त्र केवल देखने, व्याख्या करने या टिप्पणी करने के बारे में नहीं है बल्कि "कड़ी मेहनत" के आधार पर उभरने वाले "विचारों" के बारे में है। यह कड़ी मेहनत निश्चित रूप से हमारे पूर्ववर्तियों द्वारा स्थापित ज्ञान से सुगम होगी। ऐसे सैद्धांतिक दृढ़ता की कमी, जो अन्य कारकों का भी परिणाम है, जिनमें भाषा की क्षमता, संसाधनों की उपलब्धता और वास्तविक विज्ञान के गहन अध्ययन की प्रतिबद्धता शामिल है, रोजमर्रा के समाजशास्त्र और रोजमर्रा की पत्रकारिता के बीच के अंतर को अस्पष्ट बना सकता है बना सकता है। समय रहते, श्रीलंका के समाजशास्त्रियों को गहन रूप से आरोपित औसतता से समाजशास्त्र विषय को बचने हेतु ठोस प्रयास करने होंगे। ■

सभी पत्राचार शुभांगी एम.के. हेरथ को <subhangi@soc.cmb.ac.lk> पर प्रेषित करें।

> शांति, संघर्ष और हिंसा पर चिंतन करना

कलिंगा टयूडोर सिल्वा, पैराडेनिया विश्वविद्यालय, श्रीलंका द्वारा

2009 के युद्ध के अंतिम चरण के दौरान लिट्टे के अधीन क्षेत्रों से श्रीलंकाई सेना के अधीन इलाकों की तरफ गमन करते विस्थापित तमिल नागरिक।

लगभग 1960 के दशक के दौरान स्थानीय और अंतर्राष्ट्रीय शोधकर्ताओं द्वारा एक स्थिर और मुख्य रूप से शांतिपूर्ण समाज को समझने के लिए श्रीलंकाई समाजशास्त्र नृवंशविज्ञानी एवं ऐतिहासिक उपागमों से प्रारम्भ हुआ। इन अध्ययनों ने नातेदारी, भूमि–पटट्दारी, धर्म और जाति जैसे स्थायी संस्थानों को आकार देने वाले अंतर्निहित सिद्वांतों को उजागर करने का प्रयास किया। आने वाले दशकों में हिंसक सामाजिक संघर्षों के विभिन्न स्वरूपों से आश्यर्चचकित हो और उभरती वास्तविकताओं से जूझने में अनिच्छुक इन शोधकर्ताओं ने इनका सामना किया। यह आलेख 1970 के दशक से श्रीलंका में हिंसक संघर्ष की प्रकृति की जांच करता है, शोधकर्ताओं ने विभिन्न दृष्टिकोणों से इसे कैसे देखा, किन चुनौतियों का सामना किया, और शांति स्थापित करने के लिए इन अध्ययनों से हम क्या सबक ले सकते हैं।

> तीव्र और दीर्घकालिक हिंसा

1970 के दशक से श्रीलंका में भड़की हिंसा ने कई आकार लिए। ये, जनता विमुंकथी पेरमुना (जेवीपी) द्वारा राज्य विरोधी राजनैतिक विद्रोह से लेकर पीपल्स लिबरेशन फ्रंट, दक्षिण श्रीलंका में एक मार्क्सवादी शैली का युवा विद्रोही आंदोलन, जिसने 1971 और 1987 से 1989 तक अप्रत्याशित राज्य दमन का उत्पादन किया; लिबरेशन टाइगरस ऑफ तमिल ऐलम (लिट्टे), उत्तरी श्रीलंका में तमिलों के मध्य एक सशस्त्र नृजातीय–राष्ट्रवादी अलगाववादी आंदोलन जिसने 1983 से 2009 तक एक लम्बा युद्व चलाया जिसमें दोनों तरफ मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन हुआ; जुलाई 1983 में तमिल नागरिकों के खिलाफ सिंहला भीड़ द्वारा जातीय दंगों का क्रूर विस्फोट और संदिग्ध इस्लामिक आंतकवादियों द्वारा 2019 के ईस्टर रविवार 21 अप्रेल को पर्यटकों एवं ईसाइयों को निशाना बनाते हुए हिंसा के तांडव तक विस्तृत थे। जैसे हिंसा की जड़े जम गई कानून प्रवर्तन एजेंटों के साथ–साथ उनके विरोधियों के हाथों में इसने पुराने और तीव्र स्वरूप ले लिए। इन सभी संघर्षों ने राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए गंभीर खतरें उत्पन्न किये। 1970 के दशक के बाद से प्रत्येक क्रमिक राष्ट्रीय चुनावों के बाद, हारने वालों को निशाना बनाते हुए, हिंसा के नियमित एपिसोड थे। जोनाथन स्पेंसर के शब्दों में, ''श्रीलंका में हिंसा रोजमर्रा की राजनीति से पूर्ण निकासी के बजाय अक्सर सामान्य राजनीति का तीव्रीकरण है।

इस हिंसा में से अधिकांश पहचान प्रेरित थी, जो एकाश्म पहचान चाहे वह नृजातीय, धार्मिक, वर्गीय या जाति में जड़ उत्तरोत्तर एकल ट्रेक दिमाग द्वारा भडकायी गयी थी। पहचान के संघर्ष समाजशास्त्रीय विश्लेषण का आह्वान करते हैं, इसलिए नहीं कि पिछले युग में विषय के साथ उनकी निरंतरता थी बल्कि इसलिए भी क्योंकि वे पूरी तरह से विषयों द्वारा किये गये आर्थिक या राजनैतिक विश्लेषणों के सहज अनुगामी नहीं थे। स्वतंत्रता पश्चात श्रीलंका राज्य को चलाने वाली राष्ट्रवादी राजनीति, सिंहला बौद्व अभिजात वर्ग द्वारा 70 प्रतिशत से अधिक आबादी वाली नृजातीय धार्मिक बहुसंख्यक वर्ग के नाम पर, अधिकाधिक गृहीत की जा रही थी। तमिल और मुस्लिम अल्पसंख्यकों द्वारा जवाबी लामबंदी ने विविध नृजातीय–राष्ट्रीय जड़ों के साथ एक उत्तर–औपनिवेशी विन्यास में पहचान, हितों एवं सामूहिक लामबंदी के मध्य स्फूर्त परस्पर क्रिया को समझने का आह्वान किया है।

> समाजशास्त्रीय उद्यम को कमतर आंकना

इन घटनाक्रमों ने विशेष रूप से समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के लिए गंभीर चुनौतियां पेश की। उदाहरण के लिए, हावी सिंहला–बौद्व विचारधारा ने अंदर से किसी भी प्रकार के विवेचनात्मक संलग्नता का दमन करने का प्रयास किया। जैसे, एस.जे.तम्बियाह द्वारा लिखित *बुद्विज्म बिट्रेड?* ने बौद्व धर्म के विरोधाभास को उठाया, जहाँ एक पूर्ण रूप से अहिंसक सिद्वांत को तमिलों के खिलाफ हिंसा को भड़काने के लिए काम में लिया गया। यह पुस्तक श्रीलंका में प्रतिबंधित की गई और इसका प्रतिकार करने वाले कई प्रचारक

>>

लेख (सिंहला राष्ट्रवादी विद्वानों द्वारा) लिखे गये जो न केवल इसके लेखक, प्रोटेस्टैंट, तमिल पृष्ठभूमि वाले अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त श्रीलंकाई मानवविज्ञानी पर बल्कि विषय स्वयं पर भी, हमला कर रहे थे। इस मानसिकता ने श्रीलंकाई समाजशास्त्रीयों की एक पूरी पीढी, जिसमें गणमान्य ओबेसकेरे, एल.एल. सेनेविरत्ने, किट्सिरी मलालगोदा, वेलेंटाइन डेनियल, और चंद्रा जयवर्धना को विदेश में प्रवास करने और देश के बाहर श्रीलंका पर शोध जारी रखने के लिए संदर्भ प्रदान किया। न्यूटन गुनासिंधे की अगवाई में कुछ मुटठी भर समाजशास्त्रियों ने भीतर से लड़ाई जारी रखने का विकल्प चुना। अक्सर शोधकर्ता की आस्थापकता भीतर और बाहर से किसी विवाद पर हमला करते हुए प्राध ाान्य राष्ट्रवाद के साथ टकराव में आई। इसी तरह, लिटटे ने तमिल बुद्विजीवियों के किसी प्रकार के असंतोष की (उन्हें तमिल संघर्ष के गददार घोषित करते हुए) हिंसक प्रतिक्रिया दी। इस प्रकार संघर्ष गतिशीलता ने समजशास्त्रीय उद्यम को कमतर किया, जिससे निर्लिप्त वस्तुपरक विश्लेषण, यदि पूरी तरह से असंभव नहीं तो, कठिन था।

युद्व के आगे बढने के साथ, सुरक्षा बलों, नागरिक सेना, सशस्त्र गैंग और ड्रग तस्कर जो संदर्भ के अनुसार एक साथ मिलकर या एक दूसरे से संघर्ष कर रहे थे, हिंसा और अधिक जम गई। युद्व अंततः 2009 में समाप्त हो गया लेकिन 2012 से 2020 तक आतंकवादी बौद्व भिक्षुओं द्वारा उकसाये गई मुस्लिम–विरोधी शत्रुता की लहरों, संदिग्ध इस्लामिक समूहों द्वारा 21 अप्रेल 2019 को विनाशकारी ईस्टर सनडे हमला, और चयनित क्षेत्रों में निर्दोष मुस्लिमों को निशाना बनाते 13 मई के जवाबी हमलों के रूप में हिंसा चलती रही। शारीरिक हिंसा के अलावा संपत्ति का नुकसान, डराना–धमकाना, धमकियां, अवपीड़न, जन/इलेक्ट्रोनिक संचार का उपयोग करने वाले घृणा अभियान और राज्य एजेंसियों और नागरिकों द्वारा समान रूप से भेदभावपूर्ण व्यवहारों का नियमतिकरण हुआ है। जैसा कि कई शोधकर्ताओं ने बताया कि दंडाभाव की संस्कृति धीरे–धीरे जम गई है।

> बहुसंख्यक नीतियों की क्षति

राजकीय भाषा से सम्बंधित राज्य की नीति इसका एक मामला है। 1956 में बड़े पैमाने पर लोकप्रिय समर्थन के साथ चुने गये सिंहली–समर्थक महाजना एक साथ पेरामुना (पीपुल्स युनाइटेड फ्रंट) द्वारा लागू केवल–सिंहला नीति ने विशेषाधिकार प्राप्त अंग्रेजी बोलने वाले वर्ग जिसने उपनिवेश काल के बाद से देश पर शासन किया की तुलना में आम आदमी के नुकसान को दूर करने का प्रयास किया। राजकीय भाषा नीति ने तमिलों को श्रीलंकाई राज्य से वास्तव में विलग किया, साथ ही प्रतिष्ठित सरकारी–क्षेत्र रोजगार में प्रवेश करने की उनकी क्षमता को भी सीमित किया। राज्य का बहुसंख्यक पूर्वाग्रह श्रीलंकाई अभिजात वर्ग को यह महसूस कराने में विंफल रहा कि इससे तमिल भाषायी अनिवार्य रूप से हाशिये पर जायेंगे। उस समय श्रीलंका में समाजशास्त्र एक विषय के रूप में उभर रहा था और भाषा नीति पर शोध ज्यादातर राजकीय नीतियों को समर्थन देने वाले राष्ट्रवादी सिंहला बुद्विजीवियों द्वारा की जा रही थी। इस नीति का नकारात्मक पहलू कुछ वर्षों पश्चात स्पष्ट हो गया और स्वयं राज्य के अंदर तमिल के उपयोग का एक अधिक रियायती दृष्टिकोण सामने आया। हालांकि तब तक नुकसान हो चुका था।

शिक्षा, उपनिवेशीकरण, और विकास में राज्य नीतियों ने राजकीय भाषाओं जैसे पैटर्न का अनुकरण किया। वे स्पष्ट रूप से मुख्यधारायी सिंहला राजनैतिक दलों के साथ सिंहला बहुसंख्यक को लाभान्वित करने के लिए डिजाइन किये गये थे जो बहुसंख्यक समुदाय को बढावा देने वाले प्रतिस्पर्धात्मक होड़ में संलग्न थे। संरचनात्मक और सांस्कृतिक गतिशीलता अक्सर द्वीप राष्ट्र में फैली सर्पिल हिंसा के लिए वैधता का उत्पादन करने के लिए एकजुट हो कर काम करती हैं।

शांति निर्माण के निहितार्थ के रूप में, किसी भी तदर्थ हस्तक्षेप के सफल होने की कम संभावना है। ऐसा इसलिए है क्योंकि स्वतंत्रता पश्चात श्रीलंका में (जड़ित पूर्वाग्रहों के साथ किसी प्रकार की छेड़छाड़ को नाकाम करने के अंतर्निहित तंत्रों) एक निश्चित नीतिगत संरचना विकसित हुई है। जहां छोटे परिवर्तन कभी कभी उत्प्रेरक परिवर्तन पैदा कर सकते है, हम ऐसी स्थिति में हैं जहां अल्पसंख्यकों की कोई रियायत खत्म हो जायेगी। यहां और अब श्रीलंकाई समाजशास्त्र के लिए यह एक मुख्य चुनौती है। ■

सभी पत्राचार कलिंगा टयूडोर सिल्वा को
<kalingatudorsilva@gmail.com>पर प्रेषित करें।

> हिंसा का विश्लेषण करना : श्रीलंकाई राज्य गठन

फरज़ाना हनीफा, कोलोम्बो विश्वविद्यालय, श्रीलंका द्वारा

जुलाई 1983 श्रीलंका में एक निर्णायक तिथि बन गई है जिसे कई लोग जातीय संघर्ष के प्रारम्भ के संकेत के रूप में देखते हैं। इसे एक ऐसे बिन्दु के रूप में देखा जाता है जो ज्यादातर सिंहला दक्षिणी सरकार और श्रीलंका के तमिलों के मध्य संबंधों के टूटने और तमिल बर्हि–प्रवास और प्रवासी बनने की शुरूआत को दर्शाता है। यह वह भी बिन्दु है, जैसा प्रदीप जेगनाथन ने भी चर्चा की, जब, नृविज्ञान विषय ''हिंसा'' को समझने में रूचि लेने लगा।

1983 की हिंसा के तुरन्त बाद कई प्रकाशन हुए हैं। 1984 में जेम्स मेनर *श्रीलंका इन चेंज एण्ड क्राइसिस* नामक ग्रंथ में मानवविज्ञानियों के बडे समूह ने लेख दिये, उनमें से कई उस जुलाई श्रीलंका में थे। गणनाथ आबेसकेरे, जोनाथन स्पेंसर, एलिजाबेथ निसान् और रोड्रिक स्टिरैट ने इस ग्रंथ में ,सभी द्वारा महत्वपूर्ण बात रखते हुए, लघु निबंधों का योगदान दिया। दो वर्ष पश्चात स्टेनली ताम्बियाह ने और फिर ब्रूस केपफेरर और काफी बाद, वेलन्टाइन डेनियल और प्रदीप जेगनाथन ने अनुगमन किया।

> 1983 की पृष्ठभूमि

1977 से यूनाइटेड नेशनल पार्टी (यूएनपी) सत्ता मे थी और 1978 में देश में आर्थिक उदारीकरण प्रारम्भ किया गया। यूएनपी शासन का सत्तावाद 1977 चुनावों के परिणामों में स्पष्ट था (जब चुनावों के बाद तमिल–विरोधी हिंसा को लगभग एक महीने तक चलने दिया)। यह रूझान चलता रहा और 1982 के जनमत संग्रह के दंगों, जिन्होने दो–तिहाई बहुमत के साथ निर्वाचित सत्तारूढ़ सरकार को बिना चुनाव के एक अतिरिक्त कार्यकाल के लिए सत्ता में बने रहने दिया, के एक वर्ष पूर्व समाप्त हुआ। जनमत संग्रह का विरोध महत्वपूर्ण था और इसे यूएनपी द्वारा काफी सख्ती से निपटा गया। इसने अपने श्रम संघ, जथिका सेवक संघमाया की बडी सदस्यता को जुटाकर ऐसा किया। स्वयं जेएसएस का गठन श्रम संघ आंदोलन में वाम पार्टियों के समर्थन को कमतर करने के लिए किया गया था और इसकी राष्ट्रवाद की न कि समाजवाद की विचारधारा थी। यूएनपी द्वारा न्यायपालिका सहित विपक्ष में सभी को धमकी देने और आतंकित करने को स्टेनली तम्बियाह (1986) और गणनाथ आबेसकेरे (1984) द्वारा 1983 की हिंसा की पृष्ठभूमि के रूप में प्रलेखित किया गया है।

> हिंसा का नृविज्ञानी विश्लेषण

1983 ने देश के भीतर थोडे अलग प्रकार के लेखन को भी पैदा किया। जानी डी सिल्वा ने 1983 के बाद ज्ञान उत्पादन के तरीकों को प्रलेखित किया है जिसके फलस्वरूप *एथनिसिटी एण्ड सोषल चेंज इन श्रीलंका* (1984) और *फेसेट्स ऑफ एथनिसिटी इन श्रीलंका* (1987) महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखे गये। प्रथम ने नृजातीय (सिंहला) श्रेष्ठता के मिथक को तोड़ने का प्रयास किया और दूसरे ने दोनों सिंहला एवं तमिल राष्ट्रवाद को सक्षम बनाने वाली संरचनात्मक विशेषताओं की आलोचना की। सामाजिक विज्ञान समालोचनाएँ इस आशा के साथ दंगों का प्रत्युत्तर थी कि वे विमर्श और नीति को प्रभावित करेंगी।

मानवविज्ञानी हिंसा के फैलाव और क्रूरता के लिए एक अधिक ठोस ''सांस्कृतिक'' व्याख्या को ढूँढने का प्रयास करते प्रतीत हो रहे थे। इस घटना की संभावना के लिए राजनैतिक और आर्थिक स्थितियों के निर्माण का केवल वर्णन संतोषजनक व्याख्या नहीं थी।

विद्वानों ने (मुख्य रूप से) सिंहला भीड जिसे एक मानवविज्ञानी ने ''अन्यथा शांतिपूर्ण लोग'' के रूप में चित्रित किया, के क्रोध और हिंसा की व्याख्या करने के लिए तरीकों की तलाश की। इसलिए हमारे पास ब्रूस कपफेरर की तरह और काफी हद तक जोनाथन स्पेन्सर के विश्लेषण हैं (यद्यपि स्पेन्सर कपफेरर के निरूपण से असहमत है)। ये इसे सामूहिक सिंहला चेतना के तत्वों के रूप में देखते हैं जो यूएनपी की राजनैतिक ज्यादतियों के कारण निर्मित स्पेस में जन्मी हिंसा की प्रकृति के लिए व्याख्यात्मक ढाँचा प्रदान करते हैं। केपफेरर ने हिंसा को पैशचिक के रूप में वर्णित किया और तर्क दिया कि हिंसा की एक व्याख्या सिंहला चेतना की विशिष्ट तत्तिविकी थी जो जादू–टोने की पैशचिक दुनिया में उभरने वाली के समान थी। जिस संदर्भ में हिंसा हुई, उसे संरक्षित रखने वाले जटिल विश्लेषण में और साथ ही हिंसा को बनाये रखने की तरफ वर्ग शत्रुता में, केपफेरर ने हिंसा को जादू–टोने के समान बताया। स्पेन्सर ने इसे थोडा अलग प्रकार से देखा। उन्होनें इसे सिंहला के मध्य रोजमर्रा सामाजिक जीवन में माँग किये गये असाधारण सदाचार से छूट को सक्षम करने वाली राजनीति के विस्तार के रूप में देखा। स्पेन्सर ने आगे तर्क दिया कि हमले इस कारण थे कि लिबरेशन टाइगरस आफ तमिल एलम (लिटटे) की उत्तर मे ''जीत'' मंदिर के इतिवृत *महावंसा* में सुनाई गई कहानियों से उनका ''अलग'' हटना थी। *महावंसा* तमिलों के बारे में सिंहला चेतना और साथ ही सिंहला इतिहास लेखन के लिए बुनियादी ग्रंथ है, जिसने लगातार सिंहला राजाओं को ''तमिल'' आक्रांताओं के नाशक के रूप में चित्रित किया है।

हिंसा के वेग को समझने के लिए वेलन्टाइन डेनियल पूर्व के सिंहला और तमिल उपागमों को महत्वपूर्ण मानते हैं। डेनियल का तर्क है कि हिंसा की संरचनात्मक स्थितियों से एक को लोगों के दो समूहों के अतीत के प्रति भिन्न विन्यासों से उपजे असंतोष में पाया जा सकता है। एक को वे ''एपिस्टेमिक'' कहते है और दूसरी को ''ऑन्टिक''। डेनियल शक्तिशाली और अभी भी प्रेरक अंतदृष्टि के साथ समाप्त करते हैं कि स्वयं के प्रति इन दो अभिमुखनों में सन्निहित होने के दूसरों के तरीकों को मान्यता देने में विफलता और स्वयं की पहचान के प्रति चिंता और ''अतिवादी संदेह'' जो अभिज्ञान के अभाव के फलस्वरूप पैदा हुआ, को हिंसा को अग्रेषित करने वाले के रूप में समझा जा सकता है।

>>

> पोषित बैर–भाव की राजनीति

डेनियल और केपफेरर दोनों की उनके ''सांस्कृतिकवादी''और आवश्यक फ्रेमवर्क के लिए आलोचना की गई, जिसमें कई लोगों ने अपराधी कौन थे, और वे कैसे नियोजित थे के बारे में बेहतर असमुच्चित विश्लेषण का आह्वान किया। हालांकि यहॉ महत्वपूर्ण बात यह है कि 1983 के बारे में इस प्रकार की सोच एवं लेखन स्वयं भी तमिल और सिंहला राष्ट्रवाद के बैर–भाव से उस समय की अनिवार्य रूप से प्रभावित श्रीलंका की राजनीति को समझने का एक तरीका था। ऐसे विश्लेषण ने उन संरचनात्मक विशेषताओं की समझ को अलग किया जो राजनीति के उदेश्य के लिए ऐसे संबंधो के निर्माण और रखरखाव की आवश्यकता पर जोर देते हैं।

इस लाइन की हिंसा में अन्वेषण की उत्पादकता युद्ध की कहीं अधिक असाधारण हिंसा से कम हो गई थी। परिणामस्वरूप, इन मानवविज्ञानियों ने जो देखा – आदिकालीन बैर–भाव के अर्थ एवं प्रस्थिति का स्थान लेते निर्मित बैर–भाव –को और आगे नहीं धकेला। शायद इसने बैर–भाव को व्यक्त करने वाली राजनैतिक व्यवस्था की बेहतर समझ को अवरोधित किया। आज हम बैर–भाव के एक और सेट को पोषित करने के दशक में हैं–सिहंला और मुस्लिम के मध्य–और हमे इस्लामिक आंतकवादियों द्वारा भयावह परिणाम वाले हमलों को अनुभव कर चुके है। वर्तमान में हम इन घटनाक्रमों को अंतर्राष्ट्रीय आंतकवाद के फ्रेम के अलावा किसी अन्य के द्वारा समझने में असमर्थ हैं। यह समयानुचित होगा कि हम 1983 के बारे में ज्ञान के उत्पादन को शायद एक ऐसे तरीके, जो बैर–भाव को बनाये रखने के अनुभव से सीखता है, के रूप में पुनः देखे। ■

सभी पत्राचार फरज़ाना हनीफा को
<ffhaniffa@gmail.com> पर प्रेषित करें।

> धुंधली सीमाएं :

श्रीलंका में नृविज्ञान मानवशास्त्र एवं समाजशास्त्र

प्रेमकुमार डी सिल्वा, कोलम्बो विश्वविद्यालय, श्रीलंका एवं आईएसए की धर्म का समाजशास्त्र (आरसी 22) पर शोध समिति की सदस्य द्वारा

श्रीलंका में समाजशास्त्रीय एवं नृविज्ञानी अन्वेषण की लम्बी परम्परा है, जो श्रीलंकाई समाज एवं संस्कृति के पक्षों पर विदेशी एवं श्रीलंकाई समाजशास्त्रियों एवं नृविज्ञानीयों द्वारा किये गये व्यापक कार्य से स्पष्ट है। इस परम्परा में उनका उल्लेखनीय योगदान, इयान गोनेतिलेके (1979) के उपयोगी ग्रंथ सूची सर्वेक्षण एवं लिज़ निसान (1987), ब्रुस केपफेरर (1990), माइकल रोबर्टस (1997) टयूडर सिल्वा (1990, 2000) सुजान्था गुनालिजेके (2001), ससान्का परेरा (2005, 2014), सिरी हेटिगे (2010) एवं सिरी गैमेज (2014) द्वारा प्रकाशित क्षेत्रीय शोध से स्पष्ट होता है। हालांकि इस संक्षिप्त निबंध में, मैं श्रीलंका में समाजशास्त्र और नृविज्ञान के मध्य अन्तसम्बंधों पर ध्यान केन्द्रित करूंगा। इस निबंध में नृविज्ञानीयों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा किये गये शोध के कुछ क्षेत्रों को आलोकित किया गया है।

> मानवशास्त्र / समाजशास्त्र अतिव्यापन

श्रीलंकाई विश्वविद्यालयों में नृविज्ञान और समाजशास्त्र को एक अध्ययन के एक क्षेत्र के रूप में प्रारम्भ हुए 60 वर्षों से अधिक हो गये हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के मध्य समाजशास्त्र आज सबसे लोकप्रिय विषयों में से एक है।

श्रीलंकाई समाजशास्त्र की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि नृविज्ञान एवं समाजशास्त्र के बीच विभाजन की स्पष्ट रेखा नहीं है। देश में या विदेशों में प्रशिक्षित शिक्षाविद (नृविज्ञानी एवं समाजशास्त्रीय परम्पराओं में) अक्सर श्रीलंकाई विश्वविद्यालयों के समाजशास्त्र विभाग में कार्य करते हैं। श्रीलंका के कई अन्य समाजशास्त्रियों की तरह, मैं स्वयं भी दोनों परम्पराओं में प्रशिक्षित था। दूसरी अन्य उल्लेखनीय विशेषता है कि श्रीलंकाई समाजशास्त्री–नृविज्ञानियों ने श्रीलंका पर ही अपने शोध प्रयास केन्द्रित किये हैं और बहुत कम ने कहीं और शोध किया है। एस.पे. तम्बियाह का थाइलैंड पर (बौद्ध धर्म); चन्द्र जयवर्धन का गिनी एवं फिजी (बगान श्रमिकों) पर; और अर्जुन गुणारत्ने का नेपाल (नातेदारी) पर कार्य उल्लेखनीय अपवाद है। जहां तक विषय सामग्री का सवाल है, उन्हें अलग करना कठिन है, चूंकि श्रीलंका के विश्वविद्यालयों के लगभग सभी समाजशास्त्र विभागों ने अपने स्नातक एवं स्नाकोत्तर स्तरीय पाठयक्रमों को दोनों विषयों के मिश्रण के साथ विकसित किया है। ऐसा करने में अक्सर समाजशास्त्र और नृविज्ञान को अलग करने वाली सीमाओं को अनदेखा किया है। विद्यार्थियों को अंत में समाजशास्त्र के अन्तर्गत डिग्री प्रदान की जाती है। हालांकि कुछ लोगों का तर्क हैं कि वर्तमान में नृविज्ञान एवं समाजशास्त्र के नाम पर जो पढाया जा रहा है और प्रकाशित किया जा रहा है, वह अंतर्राष्ट्रीय मानकों के तुलनीय नहीं है।

> ऐतिहासिक विहंगावालोकन

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से, श्रीलंका की संस्कृति एवं समाज में नृविज्ञानी और समाजशास्त्रीय रूचि दो भिन्न ऐतिहासिक कालों में बढने लगी थीः नृविज्ञान औपनिवेशिक काल में उभरा, जबकि समाजशास्त्र उत्तर औपनिवेशिक काल में पनपा। जहां नृविज्ञान औपनिवेशिक शासन से काफी अधिक जुड़ा था, समाजशास्त्र प्रारम्भ में एक अमरीकी विद्वानों के हस्तक्षेप के मार्गदर्शन में विकसित हुआ। ऐसा मोटे तौर पर 1950 के दशक के प्रारम्भ में सिलोन विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र के प्रथम प्रोफेसर के रूप में ब्राइस रायन की नियुक्ति के कारण हुआ। श्रीलंका में नृविज्ञानीय शोध परंपरा के उद्भव को कम से कम ब्रिटिश औपनिवेशिक काल से ट्रेस किसा जा सकता है। 1911 में आदिवासी वड्डा समुदाय पर सेलिगमेन के नृजातीय कार्य को इस परम्परा का प्रारम्भ माना जा सकता है। प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्व के दौरान श्रीलंका नृविज्ञानी अनुसंधान में पिछड गया। श्रीलंका की स्वतंत्रता के तुरंत बाद 1949 में, एक विषय के रूप में समाजशास्त्र का शिक्षण प्रारम्भ किया गया और 1950 के दशक के मध्य श्रीलंकाई एवं विदेशी विद्वानों द्वारा कई नृजातीय / समाजशास्त्रीय मूल्य के ग्रंथ लिखे गये। उत्तरकालीन विद्वान जैसे ब्राइस रायन (1953), राल्फ पेरिसि (1956), एडमंड लीच (1960, 1961), गणानथ ओबेसकेरे (1966), नूर यलमान (1967), किंत्सिरी मलालगोडा (1976), एच.एल. सेनेविरत्ने (1978) और ब्रूस केपफेरर (1983) द्वारा समाजशास्त्रीय एवं नृविज्ञानी कार्यों से इसे आगे बढाया गया। स्वतंत्रता पश्चात श्रीलंका में नृविज्ञान / समाजशास्त्र के अधिकांश ने श्रीलंका के

>>

नये उभरते ''राष्ट्र–राज्य'' के मुद्दों को सीधे सम्बोधित नहीं किया बल्कि उन्होंने जाति, नातेदारी, भूमि पट्टेदारी, और लोकप्रिय धर्म जैसे मुददों पर ध्यान केन्द्रित किया।

''विदेशी'' नृविज्ञानी जिन्होंने अपने अनुसंधान का अधिकांश भाग श्रीलंका में किया मुख्य रूप से ब्रिटिश अमरीकी और आस्ट्रेलियाई विश्वविद्यालयों से आये थे। विदेशी नृविज्ञानियों ने श्रीलंका की संस्कृति, समाज और राजनीति पर अध्ययन के कई उत्कृष्ट योगदान दिये है। हालांकि उनके मानवशास्त्रीय कृत्य श्रीलंका के दो सबसे प्रमुख नृविज्ञानी, गणनाथ ओबेसकेरे और एस.जे.तम्बियाह, दोनों ही शीर्ष उत्तरी अमरीकी विश्वविद्यालयों में अपने शैक्षणिक कैरियर के दौरान प्रमुखता में आए, के कार्य से प्रभावित थे। स्थानीय नृविज्ञानीय/समाजशास्त्रीय परम्परा मुख्य रूप से इन नृविज्ञानियों के कृत्यों पर निर्मित थीं, यद्यपि विदेशी और स्थानीय विद्वानों दोनों के द्वारा बाद में किये गये शोध ने श्रीलंका में उपेक्षित एवं उभरते सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुददों के अन्वेषण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

> बदलती चिताएं

1980 के दशक के प्रारम्भ से श्रीलंकाई समाजशास्त्र/नृविज्ञान ने श्रीलंकाई समाज में सामूहिक हिंसा–जातीय–धार्मिक समुदायों के साथ–साथ समाज में वंचित वर्ग जैसे हाशिये पर युवा को लपेटने वाली अंतर–सामाजिक हिंसा के अध्ययन पर अपना ध्यान स्थानन्तरित किया है। इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले आजादी के बाद के समाजशास्त्रियों एवं नृविज्ञानियों की पीढीयों में न्यूटन गुणसिंधे, सिरी हेटिगे, और टयूडर सिल्वा सम्मिलित हैं जो विदेशी विश्वविद्यालयों से डाक्टरेट कर के लौटे थे और उन्होंने ग्रामीण श्रीलंका में असमानता, युवा पहचान एवं हिंसा, और जन स्वास्थ्य जैसे शोध के नये क्षेत्र को देखना प्रारम्भ किया। यह महत्वपूर्ण है कि उपरोक्त और अन्य विद्वानों के कार्य हाल के वर्षो में लंबे समय से स्थापित नृविज्ञानीय एवं समाजशास्त्रीय परम्पराओं के सैद्वांतिक और पद्वतिगत अंतदृष्टि से प्रभावित हैं।

इस लघु निबंध में, 1949 में, समाजशास्त्र के पहले विभाग की स्थापना के बाद से आज तक श्रीलंका के विश्वविद्यालयों में अध्ययन, अनुसंधान एवं शिक्षण के क्षेत्रों के रूप में नृविज्ञान और समाजशास्त्र के विकास का एक विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। आज देश के पन्द्रह विश्वविद्यालयों में से ग्यारह, इन क्षेत्रों में कम से कम स्नातक पाठयक्रम उपलब्ध करा रहे हैं। शिक्षण पाठयक्रम, शोध एवं प्रकाशन में नृविज्ञानीय एवं समाजशास्त्रीय परम्पराओं का सह–अस्तित्व विश्वविद्यालय प्रणाली में अलग–अलग डिग्री में स्पष्ट हैं। शिक्षण संस्थाओं के मध्य शिक्षण शोध, एवं प्रकाशन की गुणवत्ता और नृविज्ञान एवं समाजशास्त्र दोनों में दीर्घकालिक परम्पराओं के साथ जुड़ाव में काफी विविधता उल्लेखनीय है। इस पृष्ठभूमि के मददेनजर इन क्षेत्रों में शिक्षाविदों के कार्य को श्रीलंका में शिक्षण, शोध एवं जटिल और गतिशील स्थानीय एवं वैश्विक वातावरण में प्रसार के साझा मानकों को निर्धारित करने में कई चुनौतियों का सामना करने की संभावना है। ■

सभी पत्राचार प्रेमकुमार डी सिल्वा को
<prema@soc.cmb.ac.lk> पर प्रेषित करें।

> वैश्वीकरण एवं निर्भरता :

चीन में प्लास्टिक अपशिष्ट का मामला

पीनार टेमोसिन, हिरोशीमा विश्वविद्यालय, जापान द्वारा

फिलिपींन्स में प्लास्टिक अपशिष्ट। श्रेयः आदम कोहन/फ्लिकर.कॉम। कुछ अधिकार सुरक्षित।

वैश्वीकरण को एक अभिन्न प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है जहां समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों में रूपांतरण होता है। यह विकसित और विकासशील दोनों क्षेत्रों को और राष्ट्रों को सूक्ष्म से स्थूल स्तर पर प्रभावित करती है। वैश्वीकरण ने हमारे जीवन में चुनौतियों को खड़ा कर महत्वपूर्ण परिवर्तन लाये हैं। आर्थिक शासन के नये रूपों के कारण पर्यावरण भी प्रभावित हुआ है।

वैश्वीकरण के तहत विश्व की वास्तविकताओं पर ध्यान केन्द्रित करना हमें प्रभुत्व की अंतर्निहित प्रकृति का गवाह बनने की अनुमति देता है। वैश्वीकरण प्रक्रिया (या वैश्वीकृत विश्व व्यवस्था) के भाग के रूप में निर्भरता की अवधारणा अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली पर प्रकाश डालती है जो आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण ''कोर'' देशों (तथाकथित विकसित राष्ट्र) और निर्धन ''परिधीय'' देशों (तथाकथित विकासशील देश) के मध्य समझौते पर आधारित है। पारिस्थितिक चक्र में हम निर्भरता और संसाधन शोषण के मध्य संबंध को देखते हैं। इसने एक गैर–रैखिक संबंध को उत्पन्न किया है जहां विकासशील देश अपने अपशिष्ट व्यापार में विकसित देशों पर निर्भर प्रतीत होते हैं (दूसरी तरह होने के बजाय)। इसे वैश्वीकरण के परिणाम के रूप में माना जा सकता है।

वैश्वीकरण ने वैश्विक दक्षिण और उत्तर को बढते आर्थिक संबंधों के माध्यम से अधिक जुड़े रहने में मदद की हैं। हालांकि, इसके दोहरे प्रक्षेपवक्रों को देखते हुए यह संबंध पहले से कहीं अधिक

>>

जटिल हो गया है। इस अर्थ में, अपशिष्ट संस्तरण (विशेष रूप से चीन के निर्धनता चक्र में प्लास्टिक अपशिष्ट मुददा) पर एक नजदीकी नजर यह दिखाने के लिए कि यह असंतुलित संबंध यथार्थ में कैसे काम करते हैं, एक आदर्श उदाहरण होगी।

> चीन का प्लास्टिक अपशिष्ट मामला

चीन में प्लास्टिक अपशिष्ट व्यापार (कुछ के द्वारा संकट के रूप में माना गया) नई विश्व व्यवस्था में निर्भरता कैसे कार्य करता है, का सबसे अच्छा चित्रण है। वैश्विक अपशिष्ट उद्योग में, वैश्विक बाजार के 56 प्रतिशत हिस्से के साथ, चीन प्लास्टिक अपशिष्ट का दुनिया का सबसे बड़ा आयातकर्ता और संसाधक (पुनर्चक्रण योग्य कचरे के लिए एक शीर्ष गंतव्य स्थान के रूप में) है।

देशों की अन्तर्निर्भरता के समस्याग्रस्त सरंचनात्मक प्रभाव हो सकते हैं। अपशिष्ट निर्यातक देश सस्ते विकल्पों और उन तरीकों के माध्यम से पुनर्चक्रण की बजाय आँखों से दूर निस्तारण पर ध्यान केन्द्रित करते हुए अपनी ''अपशिष्ट आसक्ति'' के परिणामों से छुटकारा पाते हैं। कहने की जरूरत नहीं कि ये देश बेहतर पर्यावरणीय परिस्थितियों का आनंद लेते हुए अपशिष्ट यथास्थिति से लाभ उठाते हैं। अपशिष्ट आयात करने वाले देश (जैसे मलेशिया, वियतनाम, थाइलैंड, इंडोनेशिया और अन्य) हानिकारक स्वास्थ्य हालातों, श्रम का शोषण, पर्यावरणीय प्रदूषण और ऐसे अन्य से पीड़ित है। इससे भी बदतर, आयात करने वाले देश अपने कथित आर्थिक लाभों के कारण अपशिष्ट आयात को प्रतिबंधित करने के लिए ठोस विनियमन या नियंत्रण तंत्र बनाने में असमर्थ प्रतीत होते हैं। यद्यपि अपशिष्ट व्यापार को विकासशील देशों के लिए एक आर्थिक अवसर के रूप में देखा जा सकता है, अवसर और विषाक्त यथार्थ में असंगति है। एक विकासशील राष्ट्र के रूप में चीन को विशेष ''गिनी पिग'' के रूप में देखा जा सकता है जो विशेष रूप से अपने पर्यावरण और बढती विषाक्तता से अपनी आबादी के सार्वजनिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है (परिणास्वरूप स्वस्थ, स्वच्छ और सुरक्षित वातावरण में रहने के अधिकार का उल्लंघन करना)। इसके अतिरिक्ति, यह उन कामगारों के अधिकारों को भी प्रभावित करता है जो ऐसी खराब परिस्थितियों में विदेशी देशों के प्लास्टिक को अलग करते है।

अपशिष्ट के निर्यात के माध्यम से, विकसित और औद्योगिक देशों (जैसे अमरीका, जापान, आस्ट्रेलिया आदि) में लोग एक अधिक स्वच्छ और अधिक सुरक्षित पर्यावरण और स्वस्थ जीवन का आंनद लेते हैं जबकि चीनी कामगार (प्लास्टिक प्रदूषण से संघर्ष करते हुए) और बच्चे (प्लास्टिक पुनर्चक्रण क्षेत्र में काम के कारण स्कूल नहीं जाते हुए) अपशिष्ट उद्योग का हिस्सा होने से पीड़ित है। विकसित देशो से विकासशील देशों में फेंकी हुई सामग्री (घरेलू पुनर्चक्रण उद्योगों और नीतियों के विकसित करने के बजाय) आँखों से दूर प्रसंस्कृत होती है। यह हाल ही में इस तथ्य में तब्दील हुआ है कि निर्धनताग्रस्त देश औद्योगिक देशों के स्व–हित और अपशिष्ट निर्यात के कारण एक सामाजिक–पर्यावरणीय संकट का सामना कर रहे हैं।

> निष्कर्ष

यद्यपि, पिछले कुछ वर्षों में चीन का प्लास्टिक अपशिष्ट पुनर्चक्रण मुददा कदाचित देश की आर्थिक वृद्वि द्वारा शांत या छिपाया गया है। इसे वैश्वीकरण या वैश्विक असमानता का मुददा माना जा सकता है जहां अपशिष्ट की छंटाई और पुनर्चक्रण प्रबंधन पर निरंतर प्रधान्यता देखी जा सकती है। निर्यातक देशों के मध्य विकास में योगदान देने के बजाय, अपने असमान प्रभाव के साथ वैश्विक अपशिष्ट व्यापार एक ''पुनर्चक्रण युद्व'' या ''प्लास्टिक संघर्ष'' पैदा करता है जो चीन (और अन्य दक्षिण–पूर्वी एशियाई देश) में अमीर देशों के अपशिष्ट के कारण होता है। इसके अतिरिक्त, यह स्थापित आर्थिक और अपशिष्ट यथार्थ को दर्शाता है जिसमें विकासशील देशों पर वैश्विक उत्तर के नियंत्रण ने अवरोध पैदा किये हैं जो दक्षिण को एक अधिक न्याय संगत विश्व व्यवस्था की दिशा में अपने मार्ग पर प्रगति करने की अनुमति नहीं देता है। ■

सभी पत्राचार पीनार टेमोसिन को <pnrtemocin@hotmail.com> पर प्रेषित करें।